दो विचार

भगवान हममें विश्वास करता है इसलिये हम जहाँ तहाँ पैदा हुऐ है व उपस्थित है

हमारा कर्त्तव्य है कि प्रतिदिन का लेखा जोखा हिसाब किताब बिना पूछे उसे प्रतिदिन दे दे।

हमें भगवान मे विश्वास करना चाहिये.

"मोक्ष प्राप्त करना चाहिये...आदि-आदि...

(सदियो से चली आरही दुनिया भर की बातें)

कौन सही **कौन ग़लत**

सम्पादकीय

"श्री मणिभद्र" का 16वां पुष्प आप सब की सेवा में प्रस्तुत करते हुए हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

यह वर्ष इस श्रीसंघ के लिए दो दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रथम तो इस वर्ष भगवान महावीर का 25 सौवां निर्वाण वर्ष मनाया जा रहा है और द्वितीय-इस वर्ष पन्यास पदवी के तत्काल पश्चात् पन्यासप्रवर मुनिश्री विशालविजयजी गणिवर्य (विराट) का जयपुर में चातुर्मास है।

प्रभु महावीर की गरिमा इतनी महिमामई है कि उनके लिए किसी भी विशेषण का प्रयुक्त करना उनकी महिमा को घटाना होगा। उनके जीवन का हर पहलू अनोखा है। करुणानिधि भगवान महावीर ने हमें सिद्धान्त रूपी जो अलभ्य रत्न दिये हैं उनका मूल्य आंकना असंभव है। उन्होंने जो अपने जीवन में उतारा उसकी ही प्रेरणा हमें दी। ऐसे परम उपकारी प्रभू का हम 25सौवीं निर्वाण कल्याणक मनाने से पूर्व तैयारी स्वरूप यह वीर विशेषांक प्रस्तुत कर रहे हैं। उपकारी के उपकारों का सही मूल्यांकन और उनके उपदेशों को अपने जीवन में उसी रूप में उतारने की कोशिश ही प्रभू महावीर के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

पन्यास प्रवर श्री विशाल विजयजी म.सा. का भी जैन समाज पर कम उपकार नहीं है और विशेषकर जयपुर समाज पर। आज इस विशिष्ठ वर्ष में जब कि आप चातुर्मास प्रवास हेतु जयपुर में बिराजमान है, यह वीर विशेषांक आपके श्रीचरणों में सादर समर्पित किया जा रहा है।

इस अंक में आचार्य भगवंतों, मुनिवृन्दों, मनीषियों और विद्वानों के सागर गर्भित लेख संगृहीत हैं एवं इस संस्था की गत वर्ष की समस्त गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

विचार स्वातंत्र्य की महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए लेखकों के विचारों को यथावत् प्रस्तुत किया गया है इससे सम्पादक मडण्ल सहमत हो यह आवश्यक नहीं है और इसे लेखक के विचारों तक सीमित माना जाया। इसमें जो ग्रहणीय लगे उसे अपनायें और जो त्याज्य हो उसे छोड़ दें।

इस अंक के प्रकाशन में ज्ञात अज्ञात रूप में जिन किन्ही महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है उसके लिए सम्पादक मण्डल आभारी है।

त्रिशला के लाल हो !

—भवरलाल वैद

वर्द्धमान वीर हो, त्रिशला के लाल हो,
तेरी निराली शान प्रभु बेमिशाल हो ।।

तेरे जन्म से खिल उठे, मुरझाये हुए चमन,
खुशियो मे झूमने लगे, तव ये तीनों भुवन,
जिस धरती पे अवतार हो वह क्यो न खुशहाल हो ।।
तेरी निराली शान प्रभु बेमिशाल हो ।।1।।

चेहरे पै जिनके शोखिया, तपोवल की छा रही,
नस नस मे वीरता समता समा रही,
है नूर जिसमे ज्ञान का, तुम वो मिसाल हो,
तेरी निराली शान वीर, बेमिसाल हो ।।2।।

वाणी मे जादू, दिल मे दया, थी छिपी हुई,
रहती थी, जिनके कदमो मे, दुनिया झुकी हुई,
त्रिलोक सरताज हो, तुम्ही कृपाल हो
तेरी निराली शान प्रभु, बेमिसाल हो ।।3।।

गुजरा जमाना तेरा, हमे याद आ रहा,
तेरा अहिंसा धर्म, दुनिया मे छा रहा,
जयन्ती तेरी आज सकल, विश्व मना रहा,
'भवर' को तेरा ही दिल मे ख्याल हो
तेरी निराली शान प्रभू बेमिशाल हो ।।4।।

वर्द्धमान वीर हो, त्रिशला के लाल हो,
तेरी निराली शान प्रभु बेमिसाल हो ।

णमो अरिहंताणं
शांतिलाल दोशी
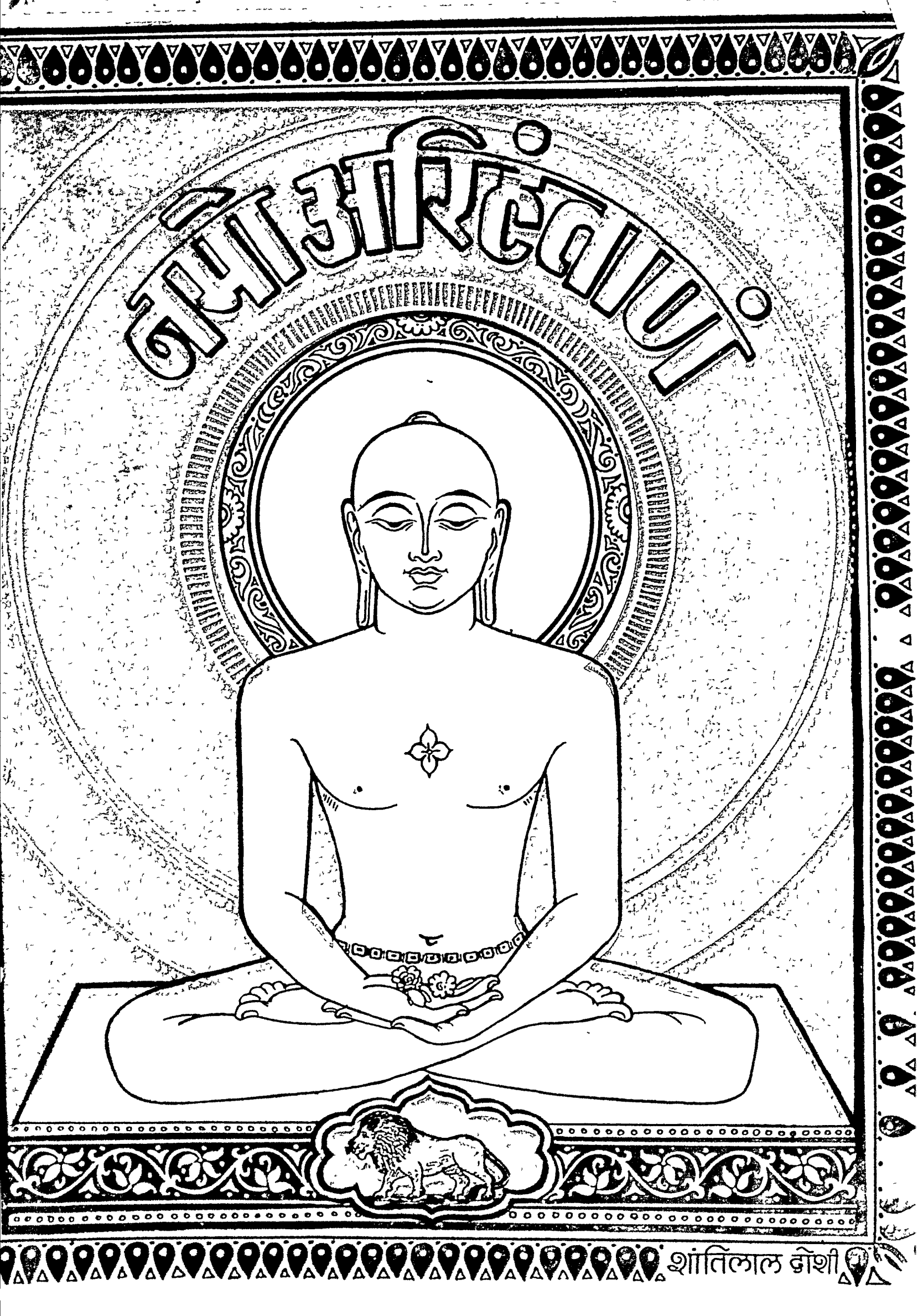
वीर विशेषांक

सम्पादक मंडल
जवाहरलाल चौरड़िया
पारसमल कटारिया
धनरूपमल नागौरी
मोतीलाल भडकतिया

प्रकाशक
श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ
आत्मानन्द सभा भवन
घी वालों का रास्ता, जयपुर–3

मुद्रक
अजन्ता प्रिण्टर्स
घी वालों का रास्ता,
जयपुर–3

अनुक्रमणिका

सादर—समर्पित

शासन सम्राट तपागच्छाधिपति जैनाचार्य, श्री **विजयनेमीसूरीश्वरजी** महाराज साहब के पट्टालंकार, पीयूषपाणि, कविकुल किरीट विजय **अमृतसूरीश्वरजी** म. सा. के शिष्यरत्न, मेवाड़रत्न, राजस्थान दिवाकर, पन्यास प्रवर **गणिवर्य श्री विशालविजयजीमहाराज साहब** सं. २०३१ द्वितीय भाद्र पद शुक्ला १ जयपुर चातुर्मास के शुभावसर पर

धर्म की बुनियाद शुद्ध मैत्री भाव

(लेखक : आचार्य श्री विजयभुवन भानु सूरीश्वरजी म.सा.)

जैनधर्म का अनूठा मैत्री भाव! मैत्री भाव माने सर्व जीवों के प्रति स्नेह भाव । अगर आप बहुतों के प्रति स्नेहभाव रखते हुए भी किसी एक-दो के प्रति भी द्वेषभाव, वैर-भाव रखते है तो आप के दिल में शुद्ध मैत्री भाव नहीं ठहर सकता । उदाहरणार्थ यदि सरकारी अफसर १०० कार्य में प्रामाणिकता रखता हुआ भी अगर एकाध कार्य में रिश्वत लेले तब उस के दिल में प्रामाणिकता कैसे कही जाए ? ऐसा ही हिसाब शील, वफादारी, सत्यभाषिता, राष्ट्रप्रेम आदि में है। मैत्री भाव में भी यही धारणा है ।

इसका फलितार्थ यह होता है कि आप अगर अपने रिश्तेदारों के प्रति स्नेहभाव रखते हुए भी पड़ौसी या किसी अन्य के प्रति द्वेष भाव रखते है तो आप में मैत्री भाव नही है। अपने देश वासी के प्रति स्नेह भाव रखते हुए भी परदेशी के प्रति द्वेष भाव रखते है तो आप में मैत्री भाव नहीं है ।

प्र०—तो क्या अपने देश के धन व संस्कृति को चूसने वाले विदेशियों के प्रति द्वेष भाव नहीं करना चाहिये ?

उ०--अवश्य नहीं। झूंठा द्वेष भाव बेकार है । इसका यह अर्थ नही कि धन व संस्कृति का शोषण बरदास्त कर लेना। स्नेह भाव से मैत्रीभाव से उसका प्रतिकार अवश्य करना चाहिए। इसमें पुरुषत्व है । मैत्री भाव इस प्रकार रखा जाए कि बेचारे वे लोग ऐसा करके अपना बुरा करते हैं, किन्तु इनका भला हो, भला इस प्रकार कि हम ठोस प्रतिकार कर उन लोगों का यह महा पाप बन्द करा दें, जल्दी ही उपाय करें ताकि उन लोगों का, यह महा पाप रुक कर, भला हो ।

इसी प्रकार अगर मानव मात्र के प्रति स्नेह भाव रखते हुए भी पशु के प्रति द्वेष भाव रखते हैं, तब आपके दिल में मैत्री भाव नही है; जैसे कि आज पशु की हिंसा करने-कराने वालो में एवं

क्रोध - लोभ
चोरी
हिंसा
सब पर उपेक्षा भाव

सर्वत्र सुखी भवतु लोकः

वैसी हिंसा के प्रशसक मे व हिंसा से जन्य पदार्थ के उपयोग करने वालों मे। ध्यान मे रहे कि अगर पशु के प्रति स्नेह भाव है तब इसकी हिंसा कर ही नहीं सकते। ऐसा नहीं कह सकते कि 'पशु को मरणान्त दु ख देकर हम उसका भला करते हैं।' जहा भले की भावना नहीं, वहां स्नेह भाव नहीं, मैत्री भाव नहीं हिंसाजन्य वस्तु के उपयोग में यही आयगा।

आप अपने में धर्म का मूलभूत मैत्री भाव चाहते हैं? तो हिंसाजन्य वस्तु की भी अनुमोदना व उपयोग से दूर रहिए।

अब आगे सोचिए। अगर मानव व पशु पर स्नेह भाव रखते हुए भी कीट-चींटी-खटमल-माखी-मच्छर आदि के प्रति द्वेष भाव रखते हैं तब दिल में मैत्रीभाव नहीं। डी डी टी. आदि जतुनाशक दवाइयो के उत्पादन, व्यापार व उपयोग में मैत्रीभाव कहा ठहरेगा?

मैत्रीभाव समस्त जीवो के प्रति स्नेहभाव है। अब अगर मानव, पशु कीटादि के प्रति स्नेहभाव तो रखा, किन्तु पृथ्वी कायिक-जलकायिक-तेजस्कायिक-वायुकायिक व प्रत्येक वनस्पति कायिक असख्य जीवों एव अनन्तकायिक कन्द आदि के अनन्त जीवा के प्रति द्वेषभाव रखा, तो अपने दिल मे मैत्री भाव कहा से रहेगा?

विश्व में एक मात्र जैन धर्म ही ऐसा है जो कि एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक की जीव व्यवस्था का व इसमे यह पृथ्वीकायिकादि असख्य एव अनन्त काय के अनन्त जीवों का दर्शन कराता है! इसी से समस्त जीव का ज्ञान हो तभी सब जीवो के प्रति स्नेह भाव स्वरूप मैत्री भाव दिल मे ला सकते हैं।

अन्य धर्मों में ऐसा जीव विज्ञान हो नहीं तब वहा शुद्ध मैत्री भाव कैसा? इसीलिए यह कहा गया कि जैन धर्म का मैत्री भाव अनूठा है। धर्म की यह बुनियाद है। ★

आज के भौतिक युग की धधकती हुई अग्नि में आज मानव मन असन्तोषरूपी अशान्ति से तडफ रहा है, अर्थ-काम की भयकर दाढ से व्याकुल हो रहा है, पाश्चात्य शिक्षण व सस्कृति के अन्धानुकरण की आन्धी मे अपनी मूलभूत सस्कृति को खो रहा है, ऐसे समय मे आध्यात्मिक दृष्टि ही उसकी व्याकुलता व अशान्ति को मिटा कर मोक्ष रूपी सुख प्रदान कर सकती है।

— मुनि गुणरत्न विजय

कहानी समझदारी की

लेखक : पंन्यासप्रवर श्री विशालविजयजी गणीवर्य (विराट)

श्री वर्द्धमान स्वामी ने तमाम बुराइयों पर विजय प्राप्त की और वे विजेता बन गये—जिनेश्वर बन गये। समूचे संसार ने उन्हें महावीर-श्रमण भगवान् महावीर कहकर पुकारा, उनकी महानता को ही नहीं, उनकी गुण गरिमा को देखकर महान् से महान् व्यक्ति भी उनका उपासक-सेवक बनने में गौरव का अनुभव करने लगा। क्योंकि भगवान् महावीर देव यथार्थवादी थे, उन्होंने संसार को आवाज़ दी—ऐ दुनियांवालों ! होश में आओ ! भाग्य और भगवान् के भरोसे बैठे रहने से आपका काम नहीं बनेगा। उठो–जागो–अपने आपको देखो–अपनी बुराइयों को जानो–पहचानो और उसे दूर करने में जी–जान से जुट जाओ। कायर मत बनो–कायरों की बात मत सुनो। वे आपको राह में पर्वत बतायेंगे–तुम्हें पर्वत में राह खोजनी है। धीरता, गंभीरता, और समझदारी से काम लो–तुम्हें अवश्य फतह हासिल होगी। प्रतिघातक हथियार, बड़ी बड़ी सेना, सोने–जवाहिरात की खानें–बड़े बड़े खजाने और समुद्र की सीमा तक की हुकूमतों से नही अपितु, सच्ची समझदारी से कामयाबी मिलेगी। आदमी कितना ही बड़ा हो, उसके हाथ पैर कितने ही लबे चौड़े हों, किंतु यदि समझदारी नही है तो कुछ भी नही है। आंतरिक कमजोरी, स्वार्थ भावना एवं धन-पद-प्रतिष्ठा की लालसा के कारण आदमी बेवूफ हो जाता है–वेवूफी ही गुनाहों की माता है। यह कह कर भगवान् महावीर देव ने संसार के चौगान में अपनी स्वयं की जीवनी-खुद की दास्तान रख दी और कहा—मनुष्य को गलती करना अस्वाभाविक नही है–किंतु देवताओं से भी आदमी इस लिये बड़ा है कि वह गलती को सुधार सकता है। मामूली अपराधों को क्षमा नही करने वाला भी बड़े बडे गुनाहों को माफ कर सकता है ? यह बात आप इस जीवनी से समझें। मनुष्य के पास असीम संभावनाए है—वह ऊंचा भी उठ सकता है और नीचे भी गिर सकता है। समझदारी से वह सब दोषों को दूर कर अनंत गुण प्रकट कर सकता है। मेरी ही बात करूं। आज से आठ भव पूर्व की बात है, सम्राट् त्रिपृष्ठ की, त्रिखंड के अखंड अधिपति की। कुछ मौजी और रसिक वृत्ति वाले उस सम्राट् के यहां अच्छे गाने-बजाने वाले थे। उनको रोजाना सम्राट् के शयनकक्ष में कार्यक्रम देना पड़ता था, पलंग पर लेटे लेटे उसे देखते सुनते ही सम्राट् सो जाते थे। यह प्रायः प्रतिदिन का कार्यक्रम था। सम्राट् ने अपने रात्रि रक्षक को कह रखा था—"हमे नींद आते ही गाने-बजाने-वालो की छुट्टी कर दिया करो"। रोज की तरह एक बार वीणा के तार छिड़ते ही वातावरण में रंगीन रौनक आ गई। कर्ण प्रिय गीत ने उसमें मादकता भर दी। मृदंग पर थाप पड़ते ही सुन्दरी के घुंघरु बधे पैर थिरक उठे। गीत-नृत्य और संगीत का प्रभाव मानो वायुमंडल में घुल रहा था, सम्राट् की आंखो पर उसका जादू छाने लगा और कुछ ही क्षणों में सम्राट् को नींद आ गई। किंतु आज महाराज के अंगरक्षक को अपूर्व आनन्द आ रहा था, वह बैठा-बैठा गीत संगीत के मजे ले रहा था। ज्यों ज्यों रात बढ़ती गई संगीत जमता गया, रक्षक मौज में डोलता रहा। और""""और अचानक ही महाराजा त्रिपृष्ठ जाग उठे।

उन्होंने अपनी कडी निगाह से यह देखा और क्रोध से उनकी आखें अगारे बरसाने लगी। वे खडे हो चीख उठे "ओ दुष्ट!" तेरी ये धृष्टता? हमारी नींद खराब कर दी। तुझे हमारे आराम से ज्यादा ये नाच-मुजरा पसद आये? ठहर, मैं अभी तुझे ठीक करता हूं।" उन्होंने ताली बजाई और अनेक सेवक आ खडे हुए। एक को कहा "जाओ, सीसा पिघला के लाओ। हम इसके कानो मे डालेंगे ताकि ससार को पता चले कि त्रिपृष्ठ की आज्ञा न मानने के क्या परिणाम होते हैं।" सेवक गया। साजिंदे-गायक आदि भी साज लेकर भागे। सम्राट् का क्रोध बढता जा रहा था—उनके पैरो मे पडा रक्षक आचल फैलाये दया की भीख माग रहा था—"आप और कुछ भी दड फरमा दीजिये। मेरा सब छीन कर राजधानी से निकाल दीजिये, परतु मेरे बाल बच्चों की खातिर मुझे जिदा छोड दीजिये-मुझे मारिये मत, महाराज। मुझ पर दया करिये "कुछ ही क्षणों में दास गर्म गर्म पिघला हुआ सीसा लेकर आया। रक्षक ने उस लाल लाल सीसे मे अपनी मृत्यु को देखा और वह जोरो से रोने व क्षमा मागने लगा, किंतु सम्राट् ने दास को आज्ञा दी कि यह सीसा इस रक्षक के कान में डाल दो, जल्दी करो'। और और रक्षक को पकड कर उसके कान मे सीसा डाल दिया गया। रक्षक ने तडफकर दम तोड दिया। महाराज के अट्टहास से वातावरण भयकर बन गया।

"चलो, उठाओ इसे यहा से, जगल मे फेंक दो, मर गया! हा 'हा हा चलो —जाओ "

और करुणा के सिंधु भगवान् महावीर देव ने कहा—"वही सम्राट् आज महावीर बना है, ससार उसे भगवान् जिनेश्वर, जेता कहता है। उस वक्त उसने मागने पर भी क्षमा नहीं दी, और आज महावीर जहा जाते हैं ससार को प्रथम पाठ यही पढाते हैं क्षमा कर दो। क्षमा अच्छी है। क्षमा ईश्वरीय गुण है। क्षमा न करोगे तो बहुत ज्यादा सहन करना पडेगा। सहन कर क्षमा दे दोगे तो निहाल हो जाओगे, पार उतर जाओगे। सभी रोगों का यही सही उपाय है, सहन करलो, क्षमा कर दो। सताने वाला थकता है-सहन करने वाला शक्तिशाली बनता है।"

यह सुनकर समूचे ससार ने परमात्मा महावीर देव के चरणों मे श्रद्धा से सर झुका दिये।

आज के दु खी ससार को भगवान् के उपदेश की बहुत जरूरत है-पहले से ज्यादा जरूरत है। भगवान् की २५०० वी निर्माण तिथि ने नई चेतना उत्पन्न की है, अपने को चाहिये कि कुछ जीवन को महान व्यवस्थित एव स्वाभाविक बनाने की कोशिश करें। उनके बताये अहिंसा व अपरिग्रह द्वारा जीवन को ललित एव फलित करें। स्याद्वाद के अजेय सिद्धांत से हर मसले को हल करें उसे विधेयात्मक रचनात्मक स्वरूप देकर-सघ एव शासन को जगम-स्थावर सब को परिमार्जित परिवर्द्धित एव सुरक्षित करने का यह स्वर्ण अवसर है, इसके लिये जान से प्रयत्न करें।●

श्रमण भगवान महावीर : साधना मार्ग की झांकियां

लेखक : मुनिराज श्री भद्रगुप्तविजयजी म. सा.

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की मध्य-रात्रि का समय था। क्षत्रिय कुण्डग्राम के सम्राट राजा सिद्धार्थ के महल मे हर्ष-आनन्द उमड़ पड़ा था। महारानी त्रिशलादेवी ने एक पुत्र-रत्न को जन्म दिया था। सूर्य से अधिक तेजस्वी और चन्द्र से अधिक सौम्य वह पुत्र था। देवों का वह आराध्य था, मानवों का परम पूजनीय था। जीव मात्र का मित्र था। जन्म जन्मान्तर की आत्मसाधना उसके साथ थी। दिव्य ज्ञान का प्रकाश उसकी आत्मा में था। अद्भुत रूप था। अपूर्व पराक्रम था। अनुपम आत्म-शक्ति थी। नाम था उनका वर्द्धमानकुमार।

अपूर्व पराक्रमी :

बाल्यकाल की एक घटना है, मित्रों के साथ वर्द्धमान कुमार खेल रहे थे, इतने में एक भयंकर काला सर्प निकल आया। सब बच्चे भयभीत हो गये और भाग गये, परन्तु वीर वर्द्धमान वहां ही खड़े रहे। सर्प को अपने हाथ से पकड़ा और दूर फेंक दिया। परन्तु वह सर्प वास्तव में सर्प नहीं था, वह तो एक देव था। वीर वर्द्धमान के पराक्रम को देखने आया था? उसने पिशाच का डरावना रूप किया, वर्द्धमान कुमार को अपने कन्धे पर बैठा लिया और लम्बा ताड़ जैसा हो गया। वीर वर्द्धमान ने एक मुक्का जमाया और पिशाच चीख उठा और जमीन पर बैठ गया वर्द्धमानकुमार के चरणों में नमस्कार कर अपने स्थान पर चला गया।

त्याग के पथ पर :

वर्द्धमान कुमार जब यौवन-वय मे आये, माता–पिता ने 'यशोदा' नामक राज-कन्या के साथ उनकी शादी कर दी। वर्द्धमान कुमार अन्त-करण से पूर्ण विरक्त थे, परन्तु अपने कर्मो को भोगे बिना कर्मों का नाश होने देना नही चाहते थे। संसार के सुखों को भोगते हुए भी वर्द्धमानकुमार का आत्मभाव निर्मल बना रहा। यशोदा ने एक पुत्री को जन्म दिया। समय व्यतीत होता गया....माता-पिता का स्वर्गवास हो गया और वर्द्धमानकुमार ससार-वास का त्याग कर आत्मसाधना के पथ पर प्रयाण करने के लिए उत्कंठित होते है। बड़े भाई नन्दिवर्द्धन के आग्रह से दो वर्ष रुक जाते हैं संसार में, परन्तु एक दिन उन्होने रानी यशोदा से विदा ले ली, राज्य-वैभव का त्याग कर वे क्षमा श्रमण बन गये, जंगलों में और पहाडों में उन्होने घोर तप और एकाग्र ध्यान की भव्य साधना प्रारम्भ कर दी। आत्मा का विशुद्ध स्वरूप प्रकट करने के लिए तपस्या और ध्यान का मार्ग उन्होने अपनाया।

अद्भुत क्षमता :

एक दिन वर्द्धमान-महावीर जंगल में ध्यानस्थ खड़े थे, वहां एक ग्वाला आया, अपने बैलों को वर्द्धमान-महावीर के पास छोडकर वह गांव में चला गया। जब वापिस आया तो अपने बैलों को

वहा नही पा वह जगल मे खोजने चला गया । इधर जगल मे गये हुए बैल पुन वद्ध मान-महावीर के पास आकर बैठ गये थे । ग्वाला भी जगल मे भटक कर वहा पुन आया । बैलो को देखकर महावीर के प्रति रुष्ट हो गया—'अवश्य इस धूर्त ने मेरे बैलो को छिपाया था । जगल मे से लकडी के दो टुकडे ले आया और ध्यानस्थ महावीर के दोनो कानो मे गाड दिये ! परन्तु धीर-वीर वर्द्धमान-महावीर का ध्यान भग नहीं हुआ, न उनको ग्वाले पर रोष आया न उनको शरीर के ममत्व ने सताया ।

दिव्य दृढता

ऐसी ही दूसरी घटना भगवान महावीर के जीवन मे घटी । भगवान महावीर ध्यान लगाकर एक वन मे खडे थे, ग्वालो ने निष्कारण वैर से प्रेरित होकर, महावीर के दोनो पैरो के बीच आग सुलगाई और पैरो का चूल्हा बनाकर खीर पकायी ! परन्तु क्षमता के सागर भगवान महावीर ने ग्वालो पर न रोष किया न प्रहार किया ! वे तो अपने आत्म ध्यान में लवलीन बने रहे ।

अपूर्व निर्भयता

उस जगल मे भगवान महावीर पहुचे जिस जगल मे चन्डकौशिक साप न हाहाकार मचा रखा था । दृष्टिविष सांप था वह । जिस पर वह अपनी दृष्टि डालता वह जल कर भस्म हो जाता था । श्रमण भगवान महावीर पर भी उसने अपनी दृष्टि फेंकी, परन्तु भगवान पर कोई असर नही हुआ । साप रोष से भर गया । उसने भगवान के अगूठे पर काटा परन्तु आश्चर्य यह कि अगूठे से लाल रक्त के स्थान पर श्वेत रक्त की धारा बह निकली । जीवमात्र के प्रति वात्सल्य भाव से भरे हुए तीर्थंकर (भगवान महावीर) का रक्त श्वेत बन जाता है । भगवान ने चन्डकौशिक साप की आत्मा को जागृत किया साप को पूर्वजन्म की स्मृति हो गई, वह आत्माभिमुख बन गया ।

भव्य प्रतिज्ञा :

एक दिन, साधनाकाल मे भगवान महावीर ने सकल्प किया कि मैं उसी के हाथ से भिक्षा ग्रहण करूगा जो राजकुमारी हो, सिर पर मुण्डन हो और हाथ पैरो मे बेडिया हों, गृह के द्वार पर बैठी हो—एक पैर बाहर और एक पैर भीतर हो । आखा मे आसू हो, ऐसी भव्य प्रतिज्ञा कर वे कौशाम्बी नगरी मे पधारे । 5 मास व 25 दिन तक वे फिरते रहे, पर भिक्षा नही मिली । एक दिन वे कौशाम्बी के धनावह श्रेष्ठि के वहा पहुँचे राजकुमारी वसुमति वैसी स्थिति मे ही वहा पाई गइ । उसके पास उडद के बाकुले थे, उसने भगवान को भिक्षा दे दी । तत्काल ही परमात्मा के प्रभाव से उसकी बेडिया टूट गई , सिर पर सुनहरे बाल आ गए और देवो ने वहा स्वर्ण के सिक्के बरसाए । वही राजकुमारी वसुमति जब महावीर वीतराग तीर्थकर बने, भगवान की प्रथम शिष्या साध्वी चदनबाला बनी ।

परम उपकारी :

मगध भूमि को नवपल्लवित करती हुई 'ऋजुवालुका' नदी के किनारे श्रमण भगवान महावीर को 'कैवल्य' की प्राप्ति हुई, वे सर्वज्ञ वीतराग बने । अपापापुरी के पास महसेन वन मे भगवन्त पधारे और वहा उन्होंने धर्मोपदेश देकर एकादश ब्राह्मणो को, उनके सशयो का निराकरण कर अपना शिष्य बनाया । वे ग्यारह गणधर बने । भगवान महावीर ने सर्वप्रथम आचार मार्ग का उपदेश दिया । भगवन्त महावीर के चरणों मे देव-दानव और राजा महाराजा नतमस्तक बने, भगवान ने 14 हजार

पुरुषों को श्रमण और 36 हजार स्त्रियों को श्रमणी बनाया। परम सुख और परम शान्ति का मार्ग बताया।

निर्वाण :

श्रमण भगवान महावीर स्वामी का जीवनकाल था 72 वर्ष का। अपापापुरी में उनका अन्तिम वर्षावास हो रहा था। राजा हस्तीपाल के मकान में प्रभु विराजमान थे। कार्तिक कृष्णा अमावस्या की मध्य रात्रि का समय था। समवसरण में विराजमान प्रभुजी 48 घन्टों से सतत धर्मोपदेश दे रहे थे....अचानक उपदेश का प्रवाह रुका, भगवान महावीर की आत्मा ने शरीर बंधन तोड़ दिया....कर्मों के बंधन तोड़ दिये....और निर्वाण हो गया। देहातीत अक्षय अरूपी अवस्था प्राप्त हो गई।

'जिन' और 'जैन' :

अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का 2500 वर्ष पूर्व निर्वाण हुआ, आज भी उनका धर्म शासन, उनका धर्मोपदेश और उनके धर्मावलम्बी मौजूद हैं। उन्होंने अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का आचार मार्ग की मुख्य आधारशिला बताई। अपनी इंद्रियों पर और कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) पर विजय पाने की प्रक्रिया बतायी। जो मनुष्य उनके कहे अनुसार अपनी इंद्रियों व कषायों को जीतने का पुरुषार्थ करने लगा वह 'जैन' कहलाया। भगवान महावीर पूर्णरूपेण आत्मा विजेता थे अतः वे 'जिन' कहलाये, उनके मार्ग पर चलने वाले 'जैन' कहलाये। जो अपने आप पर विजय पाता है वही परमसुख-परमशान्ति पाता है।

महाश्रमण

अमूल्य क्षण जा रहा है

लेखक मुनिश्री जिनप्रभविजयजी म सा

ज्ञानी पुरुषों ने मनुष्य भव को अत्यन्त दुर्लभ कहा है । यह बात प्रत्येक मानव जानता है । मनुष्य भव की दुर्लभता जब तक समझ मे नही आवे तब तक इसे सार्थक नहीं कर सकते । महान् पुण्योदय से यह मनुष्य जन्म मिला है । बार बार मनुष्य जन्म मिलना अति दुर्लभ है । मानव मे सद्‌बुद्धि प्रगट होवे तो वह इस भव को सार्थक कर सकता है । यह जीव कनक कामिनी में निरतर राग भाव को पुष्ट कर रहा है । मिथ्यात्व के उदय-के कारण जीव को वस्तु स्वरूप का भेद ज्ञात नहीं है ।

जैसे कोई व्यक्ति धतूरा खाने से उन्मत्त बन चारो तरफ भटकता है ऐसे ही यह जीव भी मोहनीय कम के उन्माद से उन्मत्त बना हुआ सारे ससार मे कनक कामिनी को सारभूत मानकर चारों तरफ भटक रहा है ।

आत्मा मे अनत सुख होने पर भी जीव अनादि कर्म के उदय के कारण भ्रमित हो गया है वह सुख-बाहर खोज रहा है । सुख भोजन में है क्या ? नहीं । सुख स्त्री मे है क्या ? नही । जगत के किसी भी पदार्थ में सुख नहीं है । अगर भोजन में सुख हो तो 4 लड्डु खाने वाले को जितना सुख हो उससे चौगुणा सुख 16 लड्डु खाने पर होना चाहिए । किन्तु ऐसा दिखता है नहीं ।

मनुष्य भव को ज्ञानी भगवतो ने दुर्लभ कहा है, इतना ही नहीं किन्तु मनुष्य भव के प्रत्येक क्षण को दुर्लभ कहा है । अमूल्य रत्नो द्वारा धन वैभव प्राप्त हो सकता है । किन्तु करोडों रत्न देने पर भी मनुष्य भव का एक क्षण का आयुष्य प्राप्त नहीं हो सकता । करोडो रत्नों से एक क्षण का आयुष्य अधिक कीमती है । मृत्यु के समय पर धनाढ्य मनुष्य सर्वस्व देने के लिए तैयार हो जाते हैं, किन्तु एक क्षण का आयुष्य बढा सकते नहीं ।

खुद भगवान महावीर भी इन्द्र महाराजा की विनती होने पर भी निर्वाण समय एक क्षण का आयुष्य बढा नहीं सके । उस समय एक क्षण का आयुष्य बढा दिया होता तो शासन का भस्म राशि ग्रह कुछ नही बिगाड सकता था । भगवान ने उस समय स्पष्ट शब्दों मे इन्द्र महाराजा को कहा- 'भावी मे जो बनने वाला होगा वो ही बनेगा । हे इन्द्र ! एक क्षण का आयुष्य बढाने के लिए तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव कोई भी समर्थ नही । आयुष्य बढाने का भूतकाल में कभी बना नहीं, भविष्य में बनेगा नही, और वर्तमान मे बन सकता नही ।

भगवान एक क्षण का आयुष्य नहीं बढा सके किन्तु अपने को सार यही लेने का है कि एक क्षण आयुष्य की कीमत कितनी ? एक क्षण का आयुष्य बढ जाता तो भस्म राशि नामक महाक्रूर ग्रह का सर्वथा उपद्रव दूर हो जाता । इस ग्रह की स्थिति शास्त्रों में दो हजार वर्ष की व बाद मे 500 वर्ष वक्रिय होना लिखा है ।

मानव जीवन में एक क्षण भी धर्म की आराधना विना जावे तो ज्ञान की दृष्टि से बड़ा नुकसान होता है और एक क्षण का सदुपयोग हो जावे तो महान लाभ होता है।

शंकराचार्यजी ने लिखा है–

क्षणमपि सज्जन संगतिरेका।

भवति भवार्णव तरणे नौका ।।

एक क्षण की जो सत्संगति है, वो भव सागर पार करने के लिए नौका समान है।

चंडकौशिक को भगवान महावीर स्वामी ने 'बुज्झ बुज्झ चंडकोशिग्रा' इतना उपदेश दिया। भगवान के इतने शब्द सुनते ही चंडकौशिक को जाति स्मरण ज्ञान हो गया। पूर्व भवों को जानकर जागृत हुआ और अनशन स्वीकार लिया। जिसके प्रभाव से उसकी आत्मा तिर्यंच गति में से निकल कर समाधिपूर्वक मरण कर आठवें देवलोक में उत्पन्न हुई। सत्सगति के प्रभाव से चिलाति पुत्र की आत्मा जो दुर्गति में जाने वाली थी सद्‌गति की भागी बनी गुरु महाराज के पास से उसको उपशम विवेक और संवर तीन शब्द प्राप्त हुए। इन तीन शब्दों का चिलाती पुत्र की आत्मा के ऊपर जादुई असर हुआ।

चिलाति पुत्र की वात विचारने जैसी है। प्रथम वो दासी पुत्र था। बचपन में कुसंस्कार पड़े थे, अनाचरण के कारण सेठ ने उसको अपने घर से निकाल दिया था। चोर की पल्ली मे गया। अपने पुरुपार्थ से आगेवान बना। सेठ की पुत्री पर अनुराग तीव्र हुआ इसलिए अपने साथियों को कहा, आज धनावाह सेठ के घर पर चोरी करने को जाना है, मुझे सिर्फ सेठ की लड़की चाहिए, धन वगैरह जो मिले वो सब आप लेना।

रात को चोरी करने के लिए गये, चिलाति पुत्र सेठ की लड़की सुपुमा को लेकर भागा, किन्तु आवाज होने से हाहाकार मच गया। सव चोर भाग गये। चिलाति पुत्र सुपुमा को उठाकर जा रहा था इसलिए सबके पीछे रह गया। उधर राजा के सैनिक चोरों का पीछा कर रहे थे। चिलाति पुत्र ने घोड़ों की टापें सुनी। सुनते ही समझ गया, सुपुमा को उठाकर दौड़ने का कार्य हो सकेगा नहीं, सुषुमा को छोड़ने के लिए भी तैयार नहीं। वाद में विचार कर तलवार से सुपुमा का सिर काट डाला। धड को रास्ते में छोड़ कर सिर को हाथ में लेकर भागा पीछे आते हुए सैनिकों ने और धनावाह सेठ ने सुपुमा का धड़ देख लिया। सुपुमा के पिता ने सैनिकों को कहा–'भाइयो! अब वापस लौटो। मेरी लड़की को मार डाला गया है। जो होने वाला था वो हो गया। सब वापस लौटो।"

जंगल में चिलाति पुत्र दौड़ रहा है। एक स्थान में साधु मुनिराज काउस्संग्रा ध्यान में खड़े हैं। उनकी शान्त मुद्रा देख चिलाति पुत्र स्थिर हो गया। मुनिराज ने काउस्सग्रा पूर्ण किया। चिलाति पुत्र ने उनसे पूछा– जीवन आनंदमय कैसे बनता है? बताओ।

मुनिराज ने कहा–उपशम, विवेक, संवर से आनंद मिलता है। चिलाति पुत्र विचारता है उपशम? मेरे में कहां है? मैं तो क्रोध से भरपूर हूं। मेरे हाथ में तो तलवार है। विचार करते ही हाथ में से तलवार गिर गई। विचार आगे वढ़ा। विवेक मेरे में कहां है? सार असार का कोई भान है नहीं? यदि होता तो मालिक की लड़की का अपहरण कैसे करता? मेरा अविवेक कितना?

मालिक की लडकी को मार डाला !! मैं कैसा नीच! मैं कैसा अधम!!! तुरत हाथ मे पकडा हुआ सुपुमा का सिर नीचे पड गया ।

सवर पर विचार करता है। मैंने तो कर्मों का वजन बढाने की कोशिश की है। कर्मों को रोकने का प्रयास नही किया। भगवान ! मेरा क्या होगा ? मन ही मन निश्चय किया । मुनिवर का काउस्सग्ग का स्थान जहा था वहा ही काउस्सग्ग ध्यान मे रहने का निर्णय किया और जहा तक दुष्कम याद आये वहा तक काउस्सग्ग मे रहे ।

हाथ व शरीर पर खून लगा हुआ है । खून की गध से चींटिया आई और उसके शरीर को काटने लगी । चिलाति पुत्र निश्चल रहा, सहन किया शुभ भाव से आत्मा सद्गति मे-देव लोक में गई ।

क्षण भर के उपदेश का फल कितना सुदर !

बिखरे मोती

शरीर मे व्याधी पैदा होना उसकी विकृति का कारण है। उसका बना रहना शरीर के लिये प्राण घातक है इसको कुशल चिकित्सक के द्वारा शीघ्रातिशीघ्र दूर करा देना ही श्रेयस्कर है।

इसी प्रकार समाज मे अनेक गल्त परपराऐं, तर्कहीन रीति-रिवाज व कुरीतिया हैं जो इसकी विकृति का कारण है। इन्हे दूर करने से ही समाज को उन्नति की ओर अग्रसर हो सकता है अन्यथा यह क्षत-विक्षत होकर अवनति के गर्त मे चला जायेगा।

× × ×

जहा विद्वता गहरी होती है, वहा सशय हो सकता है, पर अग्रसर नही। आग्रह से ज्ञात आवृत हो जाता है वहा सत्य का द्वार बन्द हो जाता है।

× × ×

अपने आराध्यदेव के साथ एकता और अभेदता की अनुभूति ही का अर्थ वास्तविक भक्ति है।

× × ×

सृष्टि के विघटन मे निर्पराधि को दण्ड मिलता नही, और अपराधी दड से बचता नही है।

—सकलन कर्ता जवाहरलाल चौरडिया

भगवान महावीर के उपदेश

लेखक : पूज्य आचार्य श्री विक्रमसूरीश्वरजी महाराज के शिष्य-
रत्न श्री राजयश विजयजी म.सा.

भगवान के ज्ञान रूप दीपक की उपदेश रूप सहस्रो किरणों से आज भी हमारा पथ प्रकाशित हो रहा है। भगवान के उपदेशों का संग्रह 'आगम' ग्रंथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भगवान ने कहा "चींटी और मकोड़े से लेकर राजा महाराजा तक सब को अपनी जान का प्रेम एक समान है, सब जीना चाहते हैं, किसी को भी मरना पसंद नहीं है अत. किसी भी जीव की हिंसा मत करो। किसी की जान ले लेना इसका ही नाम हिंसा है ऐसा मत सोचो। किसी भी जीव की मन-वचन और काय की प्रवृत्तिओं को अवरुद्ध करना भी हिंसा है। सब जीव मुक्ति चाहते हैं किसी को भी बंदी, विवश या पीड़ित मत बनाओ। अहिंसा की केवल दैहिक साधना परिपूर्ण अहिंसा नहीं है, संपूर्ण अहिंसा की साधना के लिये वाचिक एवं मानसिक अहिंसा नितांत आवश्यक है। इसलिये हिंसक वचन बोलना और हिंसक भावना रखकर बैठना भी हिंसा है। संपूर्ण अहिंसक मन, वचन और काया तीनों से अहिंसा का साधक होना चाहिए। स्वयं हिंसा नही करना पर दूसरों से करवाना भी हिंसा ही है। इतना ही क्यों, किसी के द्वारा की हुई हिंसा की प्रवृत्ति को सराहना, प्रशंसा और अनुमोदना भी हिंसा है। संपूर्ण अहिंसक के लिये यह भी त्याज्य है। अतः भगवान महावीर के उपदेश में अहिंसा का अर्थ हिंसा नहीं करना ऐसा केवल नकारात्मक (Negative) न होकर प्रेम और मैत्री भाव का चरम उत्कर्ष बना है। छोटा या बड़ा, अपराधी या निरपराधी, धर्म करने वाला या धर्म की आलोचना करने वाला सबको उनके अपराधों की क्षमा देने का और उनके अपराधों की उनके पास से क्षमा याचना करने का फरमान है। हर रोज सुबह और शाम प्रत्येक प्राणियों से 'क्षमा' का आदान-प्रदान करने की हर आदमी को आवश्यकता है। इसलिये भगवान ने उसकी विशेष आज्ञा भी दी है। जो मनुष्य एक साल से अधिक किसी भी प्राणी या मानव से अपना वैर भाव कायम रखता है और क्षमा याचना नहीं करता है वह तात्विक दृष्टि से भगवान महावीर का अनुयायी नहीं बन सकता है। वह भगवान के शासन से बाहर है। 'क्षमा' का आदान प्रदान, नि.स्वार्थता, क्षमता, और जीवों के प्रति प्रेम और आदरशीलता के अभाव में कभी बन नहीं पाता है। अत सच्ची अहिंसा जीवों के प्रति निःस्वार्थ प्रेम की चरम कोटि है।

भगवान महावीर ने सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह का भी उपदेश दिया है। ये सब भी अहिंसा के ही पूरक एवं समर्थक हैं। सत्य वचन रूप व्रत को समझाते हुये भगवान ने कहा है कि हमारा वचन सत्य तो होना ही चाहिए, लेकिन जो सत्य वचन दूसरी आत्माओं को त्रासकारी हो, भारी मनोव्यथा पैदा करने वाला हो वह वचन सत्य होने पर भी, वास्तविक स्थिति को बताने वाला होने पर भी असत्य है। कारण कि वह हिंसक है। क्रोध, मान, माया और लोभ के वश होकर बोला गया कोई भी वचन असत्य ही है।

दूसरे के अधिकार की किसी भी चीज पर अपना हक जमाने की प्रत्येक वृत्ति एव प्रवृत्ति चोरी है। जिनके आधीन होकर हम हमारा जीवन व्यतीत कर रहे हैं ऐसे किसी भी न्यायी शासक की बिना सहमति लिये अपना अधिकार क्षेत्र विस्तृत करते जाना भी चोरी ही है। चाहे वह हमारा शासक सेठ हो, राजा हो या राज्याधिकारी हो किसी भी शासक की बिना अनुमति अपना हक जमाते जाना चोरी ही है। चोरी स्वार्थ की मर्यादाहीन परिस्थिति से ही निर्मित होती है। अत वह भी हिंसा ही है। सच्ची अहिंसा नि स्वार्थता की परम और चरम साधना है। भगवान महावीर ने कहा है—अदत्त या, चोरी का त्याग करो।

ब्रह्मचर्य का साधारण अर्थ जातीय सभोग सुख का त्याग इतना ही समझा जाता है, लेकिन भगवान महावीर ने उस अर्थ को और भी सूक्ष्मता से बताया है। भगवान ने कहा है कि "जड या चेतन किसी के भी मोह मे फसकर आसक्त बनना सूक्ष्म अब्रह्म ही है" सच्चा ब्रह्मचारी अपनी ही आत्मा पर निर्भर है। आत्मा का विशुद्ध स्वरूप ही ब्रह्म कहलाता है, उसकी प्राप्ति के लिये चरण करना, प्रयत्न करना वही सच्चा ब्रह्मचर्य है।

बडे बडे विश्व युद्धो से लेकर घरेलु झगडो तक का कारण है ममत्व मेरेपन की भावना। ममत्व की भावना विश्व परिवार से मनुष्य का नाता तुडवा देती है और मानव बधुओ मे, जीव बधुओ मे परस्पर मार धाड करवाती है। मेरा घर, मेरा धन, मेरा विलास-वैभव, मेरा पक्ष, मेरा राज्य, मेरा साम्राज्य और कभी मूढता से स्वीकार कर लिया हो तो मेरा धर्म ये सब मेरेपन की भावना मनुष्य का सग्रह है। और जहाँ सग्रह रहेगा वहा सघर्ष रहेगा ही। सग्रह और विग्रह एक ही सिक्के की दो बाजू हैं। भगवान महावीर ने सग्रह की भावना को सीमित करके, परिमित करके सर्वथा नष्ट कर देने का उपदेश दिया है। भगवान महावीर ने जहाँ तक स्वार्थ की मर्यादा है वहाँ तक परिग्रह की मर्यादा बतायी है। देह को धारण करना भी यदि सग्रह के रूप मे होगा तो वह भी विग्रह करायेगा। अत हम ऐसी दशा प्राप्त करें जहा देह का धारण करना भी स्वार्थ न हो केवल परमार्थ ही उससे सिद्ध होना हो। यदि भगवान के इस अनुपम उपदेश का सारा विश्व केवल एक क्षण के लिये भी एक साथ आचरण करे तो आज के विश्व की समस्याओं का समाधान एक ही क्षण में हो जाय।

भगवान ने वैचारिक सतुलन और समानता के लिए महान दृष्टि का उपदेश दिया है। उस दृष्टि का नाम है अनेकात। अनेकात के बिना अहिंसा की साधना नही हो पाती है और न अहिंसा के पालन बिना अनेकात दृष्टि सफल होती है। अनेकात दृष्टि एक अनोखी विचारधारा है। उस विचारधारा का मुख्य उद्देश्य है सत्य की अनेक विधता सिद्ध करना। सत्य भी कभी एक मुखी नही हो सकता है, वह अनेक मुखी है। अत एक दृष्टिकोण से किसी भी पदार्थ या व्यक्तित्व की विवेचना करना गलत है। एक ही मनुष्य अपने जीवन काल मे हजारो भली बुरी प्रवृतियाँ करता है। किसी समय का प्रसिद्ध डाकू दूसरे समय में प्रसिद्ध सत बन जाता है। सत पुरुष भी कभी विचार के परिवर्तन से त्रासकारी लुटेरा बन जाता है। अत किसी भी व्यक्ति के लिए 'यह चोर ही है' या 'यह सत ही है' ऐसा कहना गलत हो जायेगा। क्योकि मनुष्य का सारा व्यक्तित्व जीवन की सर्व घटनाओ से ही प्राप्त होता है। प्रसिद्ध विश्व वैज्ञानिक का चित्रकला के विषय मे अज्ञान साधारण मनुष्य से बढकर भी हो सकता है, वे इस विषय मे मूर्ख भी गिने जा सकते हैं। अत विषयों की अपेक्षा किये बिना उस वैज्ञानिक को मूर्ख या विद्वान दोनो मे से कुछ भी कहना गलत है। उनमे मूर्खता भी है विद्वत्ता भी है। अत पूरी सोच समझ बिना किसी को सज्जन—दुर्जन, पापी—धर्मी, भला-बुरा कह देना असत्य

है। सत्य का परीक्षण परिस्थितियों एवं दृष्टिकोण के सहारे होना चाहिए। सत्य एक, नहीं अनेक
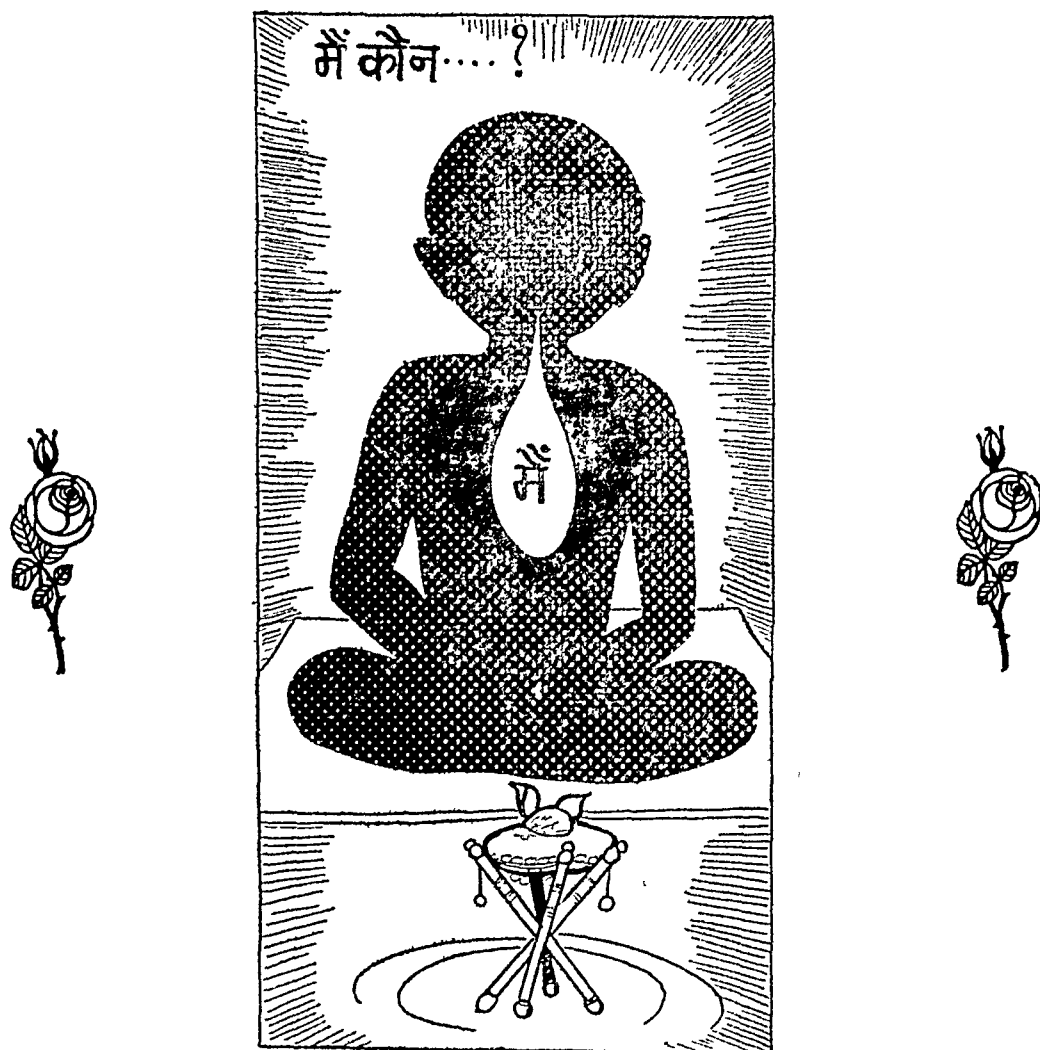
नही संख्यातीत और कल्पनातीत दृष्टिकोण पर आधारित है, अतः विश्व के किसी भी पदार्थ, धर्म, सिद्धांत एवं समस्या की विवेचना सापेक्ष होनी चाहिए। अपने दृष्टिकोण से हम जो विवेचना करें, हो सकता है उससे बिलकुल विपरीत विवेचना दूसरे दृष्टिकोण से कोई दूसरा भी करे। सत्य दोनों के समुचित अनुसधान से ही प्राप्त होगा। बहुत ही संक्षेप से कहें तो कहा जायेगा कि भगवान महावीर की अनेकांत दृष्टि से दुनियां का कोई भी सिद्धात, पदार्थ या धर्म असत्य नहीं है, झूंठा नही है, यदि सही ढ़ंग से उस पदार्थ, धर्म या सिद्धांत की आलोचना की जाये। और कोई भी सिद्धांत या धर्म सत्य नही वन सकता यदि उनको देखने का ढ़ंग गलत स्वीकार लिया जाय। दुनियां का कोई भी सिद्धांत या धर्म ऐसा नहीं हो सकता है जो किसी एक दृष्टिकोण से सत्य प्रमाणित न हो सकता हो। अतः विरोधी विचारों का तिरस्कार नही आविष्कार करना जरूरी है। यह कभी मत भूलो कि कभी भी नहीं चलने वाली झूंठी घड़ी भी दिन में दो दफे सच्चा समय बताती है। योग्य काल और योग्य परिस्थितियों में कैसा भी असत्य सत्य बन सकता है। अनेकांत दृष्टि में उगते पौधे जैसा स्वस्थ और बहते पानी जैसा निर्मल वनने का अनुरोध करती है।

आज के पवित्र दिन हम अहिंसा और अनेकात के विचार, आचार और प्रचार का संकल्प करें। करुणा मूर्ति भगवान महावीर की दया, क्षमा, अहिंसा और उदारता के डंडीम नाद से इस त्रस्त विश्व की आहों को शमन करने का शुभ संकल्प करें।

महा प्रभाविक नवकार मंत्र

अनादि जगत के वासी मनवा गिण ले तू नवकार
मनवा जप ले तू नवकार

शाश्वत सुख के दायक ये हैं
कठिन कम के क्षायक ये हैं
भवजल तारण हार मनवा १

चौदा पूर्व का सार है इसमे
अरिहत सिद्ध सूरि हैं जिसमे
पाठक श्री अणगार मनवा २

पूर्व भव मे नवकार सुणकर
दु ख को भूल गई लीन बनकर
जन्म लिया नृप द्वार मनवा ३

दाम के वास्ते पिता ने दिया
यज्ञ के वास्ते नृप ने लिया
नाम से अमर कुमार मनवा ४

नवकार प्रभाव से सिहासन हुआ
राजा प्रजा को आश्चर्य हुआ
हुआ जय जयकार मनवा ५

मारने वल्लभ सप को रखता
पढकर नवकार ग्रहण करता
पाई श्रीमती माल मनवा ६

राय रक अर सुर नर योगी
गिणे प्रेम से रोगी भोगी
टालें दु ख अपार....मनवा ७

आतम कमल मे नित नित ध्याते
लब्धि सुख को "कल्प" से पाते
लाख नवगिणतार मनवा ,८

नमस्कार-मत्र

नमो अ रि ह ता ण
नमो सि द्धा णं
नमो आ य रि या ण
नमो उ व ज्झा या ण
नमो लोएसव्वसाहूण
एसो पच नमुक्कारो
सव्व पावप्पणासणो
मगलाण च सव्वेसिं
पढम हवइ मगलं

विचित्र संसार

लेखक : **मुनिश्री प्रवीणविजयजी म० सा०**
आचार्यश्री प्रकाशचन्द्रसूरीश्वरजी के शिष्यरत्न

यह संसार कितना विचित्र है और दयनीय भी, इसका यह एक ही चित्र पर्याप्त है। किसी घर मे प्रात काल नानी की मृत्यु हो गई। घर वाले शोक मग्न थे कि गृहपति की स्त्री ने कन्या को जन्म दिया और उसी समय जबकि मृत नानी की अरथी सजायी जा रही थी, घर के बाहर पुत्रवधु का 'डोला' आकर रुका। हर्ष और शोक के चिन्तनीय प्रसंग—एक दिन मे तीन-तीन बार उपस्थित हुए। यह विडम्बना कैसी आश्चर्यप्रद है ? जैसे क्षण-क्षण में नाट्य मंच के पात्र, दृश्य और अङ्क परिवर्तित हो रहे हों।

यह दृश्य देखकर चतुर चित्त में वैराग्य उत्पन्न हो जाता है किन्तु मूर्ख इस भेद को नही जानते। वे बारम्बार सुखों-दुःखों से निकलकर उन्हीं में समाते रहते है। वे क्षण में सुखी और क्षण में दु.ख-सन्तप्त होते रहते है जैसे रहंट के कूप-शराव पल-पल में भरते और रीतते हैं।

तन और मन से अस्वस्थ व्यक्ति एक ही भव मे अनेकानेक भवो की दुर्गतियो को एकत्र कर जीते है। वे देखते है कि फूले पुष्प मुरझाये जा रहे है, हरे-भरे वृक्ष ठूंठ मात्र रह गए है, वृद्ध होती हुई मानव-पीढ़िया काल के विकराल गाल में समाती जा रही है और प्रत्येक श्वास मृत्यु के समीप और समीपतर होता जा रहा है। इस पर भी उसे तो अमर होने की कल्पना नजर आ रही है, चाहता है कि जीवन का कभी अन्त न हो तो अच्छा रहे। कही से अमरफल मिल जाए और मृत्यु से सदा के लिए छुट्टी मिले। किन्तु उन्हें अमरफल कहां से मिले ? **जो आम खाना चाहें और बबूल में हाथ डाले, उसे रसीले फल कहां से मिलें ? जो रात-दिन विषय रूप विष भक्षण करते हैं वे अमृत को कैसे पा सकते हैं ?** महाप्राण और दीर्घजीवी होना उनके भाग्य मे नही होता। वे बेचारे अल्पप्राण ही रहते है।

पानी की लहर पर नाचते हुए बुलबुले की उपमा देते हुए ऐसे दयनीय प्राणियो के विषय मे लिखा गया है—मनुष्य यदि अपनी पूर्णायु को प्राप्त करे तो सौ वर्ष जी सकता है। उसमें निद्रामय रात्रिकाल निकाल दिया तो पचास वर्ष बचे। बाल्यावस्था अपरिपक्व और वृद्धावस्था अशक्त होने से पचास वर्ष में से दो भाग और निकल गये, यौवन मे कुछ करने की क्षमता होती है किन्तु 'अधिकांशलोग तरुण समय तरुणीरत रह्यो' उक्ति को चरितार्थ करते हैं। ऐसा लगता है कि पानी पर तरंग है, जो चलायमान है। क्षण भर भी उसे ठहरकर सोचने का समय नही मिल पाता। एक **भीड़ लगी हुई है जिसमें निरन्तर धक्के लग रहे हैं—उत्पद्यमान शैशव, वर्धमान यौवन और क्षीयमाण वार्धक्य-एक के बाद दूसरा चला ही आ रहा है। ठहरने का अवकाश नहीं और कोई ठहरने देता नहीं।** आत्मा की चादर जो विषय-पंक से दूषित हो रही है, विषयों से ही स्वच्छ की नहीं जा सकती, वासना-पंक को क्षालित करने के लिए संयम रूप साबुन ही समर्थ है।

आज के भौतिक युग में युवा पीढ़ी अपने अमूल्य मानवजीवन को ईश्वरोपासना के द्वारा सार्थक बनावे यही मंगल कामना है। ●

मानव मन सकीर्ण विचारो से वामन(क्षुद्र) था । पक्ष के कदागृह से जन जीवन एक दूसरे से अलग होकर दूषित था, अत अनेकान्त की सरस्वती के रूप मे प्रभु श्री महावीर की तीसरी धारा का उद्गम हुआ ।

एकान्त मे सत्य नही है, कदाग्रह मे धर्म नही है । हठाग्रह से तत्व प्राप्ति होती नही है । मेरा वह सच्चा ऐसे नही किन्तु सच्चा वह मेरा इस मन्त्र से ही ससार का उद्धार है । विचार के द्वार सभी दृष्टिबिन्दु से सोचने के लिए मुक्त रखिए, कदाग्रह के बन्धनो से बधे हुआ धर्म या दर्शन से आत्मोद्धार होना दुशक्य है ।

अनेकान्त की धारा से शतमुखी निराग्रह विचार बिन्दुओ की मधुर वर्षा द्वारा जनसमूह के अन्तर का धरातल कमल सा कोमल होकर स्थायी शान्ति की हरित क्रान्ति का साम्राज्य छा गया ।

अहिंसा की गगा, अपरिग्रह की यमुना एव अनेकान्त की सरस्वती रूप त्रिवेणी की पावन धारा ने विश्व को सुख शान्ति एव सतोष की दिव्य भेंट प्रदान की ।

इस प्रकार विश्व पर असीम कृपा के वर्षक प्रभु श्री महावीर के अमर सन्देश का धारा-बद्ध प्रवाह 2500 वर्ष से अविरल गति द्वारा चालू है जिससे आज भी विश्व के प्राणी नव चेतना के मधुर गीत गा रहे हैं । किन्तु खेद की बात यह है कि प्रभु श्री महावीर के ही उपासक विभिन्न सम्प्रदायो मे विभक्त होकर अपने-अपने पक्ष समर्थन मे प्राप्त सामर्थ्य का उपयोग कर रहे हैं ।

इस लिए विश्ववात्सल्यवारिधि प्रभु श्री महावीर के निर्वाण शताब्दी वर्ष मे जैन समाज के सभी सम्प्रदाय एक होकर परमात्मा के चरणो मे श्रद्धाञ्जलि समर्पित करें, परिणाम स्वरूप विश्व के कोने कोने मे प्रभु श्री महावीर की अहिंसा अपरिग्रह अनेकान्त की गगा, यमुना, सरस्वती रूप तत्व त्रिवेणी की दिव्य धारा प्रवाहित हो । विश्व के सभी प्राणी पावन त्रिवेणी धारा से पूत होकर नरेन्द्र सुरेन्द्रो के समूह मे सम्मानित होकर मुनीन्द्र बनी द्रा म अभीष्ट मुक्ति क मगल मन्दिर मे प्रविष्ट होने का सौभाग्य प्राप्त करें यही मगल कामना है ।

विचार वैभव

लेखक : मुनि श्रीकल्पयशविजयजी म. सा.

मानव जीवन में धर्म ही शरण भूत है, मनुष्य जीवन पाकर की हुई धर्म आराधना के फल–स्वरूप प्राप्त किये हुए मानव जीवन में आत्मा को शुद्ध कर जीवन सार्थक करने वाला ही सुज्ञ पुरुष है, वही जीवन का मूल्य समझने वाला है।

मानव जीवन एक बाग है आप उसके मालिक है। यह बाग कैसे नवपल्लवित हो यह आप पर आधारित है।

मानन जीवन की प्राप्ति धर्माचरण द्वारा कर्म का बंधन तोड़ने के लिये है। यह मन में जंच जाय तो धर्म करना आसान बन जाय।

आंख प्रभु दर्शन के लिए, कान प्रभु गुण सुनने के लिए, जीभ प्रभु गीत गाने के लिए, हाथ दान देने लिए और पांव तीर्थ यात्रा के लिए मिले है, अरे! सम्पूर्ण काया का प्रभु भक्ति के लिए निर्माण हुआ है यह याद रखो।

जीभ से खून भी करा सकते है और खूनी को बचा भी सकते है। जीभ में जहर भी है और अमृत भी।

पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु, वनस्पति और चलते फिरते प्राणी मेरे एक या दूसरी तरह उपकारी है ऐसा सोच समझकर सभी प्राणियों पर दया रखना सीखे।

आपके यहां जन्मा हुआ बालक आपके पास पूर्व का शेष हिसाब पूर्ण करने के लिए आया है, ऐसा समझकर उनके साथ व्यवहार करें।

भूतकाल के कर्मो के फल का अनुभव करते हुए भविष्य के कर्मो के फल को चक्षु के सामने रखकर वर्तमान जीवन जीना सीखें।

प्रभु भक्ति की सांकल से मन को बाध कर रखे।

सार्धमिक की आशातना धर्म तीर्थ की आशातना है।

संसार के सुखों का अनंत वर्ग करने पर भी मोक्ष सुख का एक अंश नही बन सकता जैसे एक शून्य का अनंत वर्ग करने पर भी एक अंक के बराबर नही आ सकता।

मोक्ष पाने के लिए प्रमाद टालना होगा। रसनेंद्रिय को जीतनी होगी, मन को वश में लाना पड़ेगा, वचन गुप्ति का ख्याल रखना पड़ेगा, हाथ को दान के मार्ग पर जुडना पडेगा, नयन को अन्तर प्रदेश में घुमाना पड़ेगा और काया से हिंसा न हो जाय इनका ख्याल रखना पड़ेगा।।

सज्जन तजता न सज्जनता, दुर्जन तजता न वैर;
चंदन तजता न सुवास को, सोमल तजता न झैर।।

देह के संग से अच्छे से अच्छे आभूषणो को, और देह को सुशोभित करने वाले कपड़े को अग्नि का ताप सहना पड़ता है तो फिर देह के निरंतर संग में रहने वाली आत्मा को कितना कष्ट का ताप सहना पडेगा? इसलिए ममत्व भाव को दूर कर आत्मभाव में खेलना सीखे।

कलियुग में मानव को 'टाईम' ने जकड़ लिया है इनसे छूटकर धर्म की साधना किस प्रकार कर लेना ऐसा विचार सुज्ञ पुरुषों को ही आता है।

गोसवारे पन्ने के हैं या माणक के ???

लेखक आर्यपुत्र उदयसागरजी म० सा० ओसवाल भवन जगदलपुर

श्रद्धा, भक्ति व प्रेम से मुझे पवित्र मार्गानुसारी आत्माओं द्वारा भगवान, संन्यासी, त्यागी, बाबा, फकीर, बड़ा गुरुजी, महात्मा, ऋषि मुनि, मुनिराजादि विभिन्न सबोधनों से संबोधित करने से घासफूस की झोपड़ी से लेकर संगमरमर के महल मालिया तक में रातें व्यतीत करनी पड़ती हैं, अत: मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि—जो मनुष्य जैसा दिखाया करता है, मनवाना चाहता है वह वैसा नहीं है। फिर भी परमात्मा वीर के संदेश पर संपूर्ण श्रद्धा वाला श्रेणिक राजा भी मिल सकता है। (वर्तमान में) महिलाओं के जीवन में अज्ञानता बनी रहेगी तो देश जाति व समाज ऋषि मुनियों की संस्कृति का पालन करने में असमर्थ रहेगा। सप्तव्यसन, कम ज्यादा परिचय में होने से खून में विकृति ने प्रवेश प्राप्त कर लिया है अत महाजन पद की योग्यता कम हो रही है। आत्मीयता और व्यवहार को समझो। वाक् पटुता के चक्कर से बाहर रहो, वरना धोखा खिलाते हुए खाना भी पड़ेगा।

□

अहिंसा

ओ ! अहिंसा के पुजारियो
आज अहिंसा सिसक रही है।
जो शूरमाओं से शोभित थी,
आज कायरों से दूषित है ॥१॥

क्या संस्कृति की रक्षा हेतु,
खड्ग उठाना पाप है ?
क्या कुमारपाल श्रेणिक आदि,
अन्याय को सहते थे ॥२॥

क्या चक्रवर्ती तीर्थंकर आदि
सत्वहीन कायर थे ?
वस्तुपाल तेजपाल क्या,
अहिंसक नहीं कहलाते थे ॥३॥

इसकी अतल गहराई में,
वीरों की ध्वनि झंकृत है।
अहिंसक तीक्ष्ण अस्त्र भी,
आज हममें कुंठित है ॥४॥

क्या कमजोरी ढकने को,
अहिंसा का बाना ओढ़ा है।
हम वीर के नन्दन हैं,
वीरों की अहिंसा अपनानी है ॥५॥

अशोक भंडारी

'मिच्छामि दुक्कडं' कहने से पूर्व द्वेष की आग बुझाना आवश्यक है

लेखक : श्री प्रियदर्शन

मैं मानता हू तुम्हे वहुत बुरे अनुभव हुए होंगे। मै यह भी स्वीकार करता हू कि द्वेष करने से पूर्व तुमने मन में खूब सोच विचार किया होगा। इसमें किसी प्रकार से कोई कमी नही रखी होगी। फिर भी मै तुमसे कहता हूं—मेरे भाई, इस द्वेष की आग को बुझा दो, शान्त कर दो। जिनके पास वैचारिक शक्ति है, जो बुद्धिमान है, जो मोक्षमार्ग के पथिक है, उन्हे द्वेष करने की तनिक भी आवश्यकता नहीं है। अपने पिछले अनुभवों को फेंक दो, ऐसा मैं थोड़े ही कहता हूं ? मै ऐसा भी नही कहता कि जो निरन्तर तुमसे द्वेषभाव रखते है उनके साथ तुम रहो। मैंने कब ऐसा कहा है। मेरा कहना तो यह है कि वह व्यक्ति भी तुम्हारे जैसा ही मनुष्य है, तुम्हारे जैसा ही हृदय उसके भी है। तुम्हारे जैसा ही उसका मन है। अतः ऐसा कैसे मान ले कि उसमे परिवर्तन नही होगा। संभव है उसकी नीचता के सैकड़ों प्रसग तुमने देखे हों। फिर भी मै कहता हू कि उसके हृदय के भीतर अपनी दृष्टि डालो, उसे टटोलो, तुम देखोगे द्वेष के अमावस्या जैसे घोर अंधकार में भी उसके हृदय पटल पर प्रेम और सत्य के तारे टिमटिमा रहे है।

मै यह भी नहीं कहता कि उसके समस्त दुर्व्यवहार को भूल, उसे महासन्त मान उसके साथ वैसा ही व्यवहार करो। परन्तु मेरा तो कहना यह है कि तुम केवल एक वार उसके प्रति द्वेष की दुर्भावना का त्याग कर जो कुछ वह कहता है उस पर विचार करो। मैं विश्वासपूर्वक कहता हूं इससे जो तुम्हें आत्मप्रतीति होगी वह तुम्हे किसी प्रकार की कोई हानि नही पहुंचावेगी।

तो फिर तुम अपने हृदय को प्रेमवारि से सिंचित क्यों नहीं रखते ? क्या तुमने देखा नही, पढ़ा नही अथवा अनुभव नहीं किया कि अधोगति की खाइयों मे गिरा जीव कभी उन्नति की सतह पर न आया हो।

क्या तुम्हारे स्नेही, स्वजन, मित्र, वंधु अथवा परिचितो में तुम्हे ऐसा देखने को नहीं मिला ? मैं तो तुम्हे केवल यह कहना चाहता हूं कि चाहे वह आज कितना ही अपराधी हो, दुष्टताओं का भण्डार हो फिर भी एक दिन अवश्य ऐसा आयेगा जब उसमें कोई अपराध शेष न रहेगा, वह महान् गुणो का पुंज बनेगा। यह समझ कर ही उसके साथ द्वेषभाव का परित्याग कर दो।

भाई मेरे ! द्वेष से तुम्हारा हृदय श्याम हो जाय, प्रीति का सरोवर सूख जाय, परिताप से मन झल्ला उठे, हर किसी को तुम्हारी ओर से खिन्नता मिले, हृदय में वैर की गांठ मजबूत हो जाय और आत्मा कुसंस्कारो का घर वन जाय तो क्या यह सब तुम्हे अच्छा लगेगा, तुम इसे पसन्द करोगे ? अतः यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा कोई विगाड़ न हो तो द्वेष की ग्रन्थि को तोड़ फेंको। ज्यादा

क्या कहूँ ? इतना ही कहना पर्याप्त है–दूसरा यदि मूर्ख है, बदमाश है, झगडालू है तो उसकी मूर्खता, बदमाशी अथवा झगडालूपन की ओर तुम्हारा ध्यान नहीं जाना चाहिये, उसकी इन दुष्प्रवृत्तियों का प्रतिबिम्ब तुम्हारे अन्त करण में नही गिरना चाहिये क्योंकि इससे तुम्हारा अहित होगा। दूसरों की बुराई का प्रतिबिम्ब यदि तुम ग्रहण करोगे तो तुम भी वैसे ही बन जाओगे।

तनिक विचार करो। मानव हड्डी, मांस और रक्त का पुतला है। उसमें गुण और अवगुण दोनों हैं, दुर्जनता है तो सज्जनता भी उसमें है। ऐसे मिश्रणों से ही इस जीव सृष्टि का प्रवाह चल रहा है। हा, सज्जनता के अश विशेष वाला मानव साधु और दुर्जनता के अश विशिष्ट वाला शैतान कहलाता है।

ऐसे विश्व मे यदि तुम प्रेम और वात्सल्य की स्थापना करना चाहते हो तो तुम्हें द्वेष की अग्नि को बुझा देना होगा।

विचार करने पर तुम्हें ज्ञात होगा कि तुम्हारी प्रेम या द्वेष की विचारधाराए भी स्थिर नही हैं। पल में द्वेष आता है और पल में प्रेम। जैसे कुत्ता रोटी मिलने पर प्रसन्न, आनंदित होता है और रोटी छीनी जाने पर द्वेषी बन जाता है वैसे ही यह मनुष्य भी जहा उसका स्वार्थ सधता है वहा प्रेम करता है और जहा उसके स्वार्थ साधन में बाधा पडती है वहा वह द्वेष करने लगता है। यदि ऐसा है तो फिर मानव और पशु मे भेद ही क्या रहा ?

मेरा कहना यह है कि तुम जो द्वेष करने के लिए दूसरे को दोषी ठहराते हो वह ठीक नहीं है, क्योंकि दोषी तो तुम स्वय ही हो। अत 'द्वेषभाव दूर करने के लिये दूसरे को सुधरना चाहिये' यह बात इतनी सच नहीं है जितनी कि 'द्वेषभाव दूर करने के लिए स्वय को सुधरना चाहिए' यह बात।

भविष्यकालीन जीवन का निर्माण वर्तमान जीवन पर आधारित है, अत वर्तमान जीवन ऐसा जीओ जिसमे प्रेम का अखण्ड प्रवाह बहता रहे।

- उसके लिए आवश्यक है द्वेष की आग बुझा डालो।

'मैं आप से क्षमापना करता हूँ', जब भी सवत्सरी का महापर्व आता है यह ध्वनि सुनाई देती है, किन्तु सवत्सरी के साथ-साथ यह ध्वनि भी विलीन हो जाती है, उसका गुन्जन बद हो जाता है। प्रश्न है क्या क्षमा वर्ष में केवल एक ही दिन धारण करना है ? क्या एक ही दिन क्षमाशील बन क्षमा का अभिनय करना है ? क्या इससे हमारी आत्मा शुद्ध हो जावेगी ? क्या द्वेष की आग बुझ जायेगी ?

आज धरा का अमृत सूखा जा रहा है, आकाश से लावा बरस रहा है, कहीं भी शीतलता का नाम शेष नहीं है पारस्परिक पवित्र स्नेह बधन टूटते जा रहे हैं, प्रेम पुष्पों की सुरभि से महकती बगिया उजडी हुई सी लगती है, चारों ओर घोर निराशा छाई हुई है, जीव मात्र बेचैन है, उन्हें न दिन को चैन है और न रात्रि में, निद्रावस्था में भी ईर्ष्या और द्वेष, वैर और विरोध के स्वप्न आकर नींद को हराम कर रहे हैं।

'मेरा दुष्कृत्य मिथ्या हो' यह क्या केवल कहने भर के लिए ही है ? क्या अन्त करण के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं है ? दुष्कृत्यों की स्वीकृति एव निराकरण के बिना 'मिच्छामि दुक्कड' का क्या अर्थ है ?

वर्षों तक भी ऐसा अभिनय करने से क्षमा की आराधना नहीं होगी, हृदय निर्मल नहीं बनेगा, वैर विरोध का ज्वालामुखी शान्त नहीं होगा, आत्मा में शान्ति और आह्लाद नहीं उत्पन्न होंगे।

'मिच्छामि दुक्कडं' मुख से तो कहना और दूसरों के दोषों को उघाड़ना, इससे बड़ी आत्म-वञ्चना और क्या हो सकती है। क्षमा तो हम वर्षों से करते आ रहे हैं किन्तु इससे क्या हमारा हृदय निर्मल हुआ है? हम दूसरों को ही अपराधी, अयोग्य समझते हैं, अपनी कमियां नहीं देखते। अपनी कमियों को दूर किये बिना सुधार सम्भव है ही नहीं।

दूसरों के दोष देखने की अपेक्षा उनके गुणों की ओर ध्यान दो। तभी निर्दम्भ हृदय से क्षमा-याचना सम्भव हो सकेगी। अपने दोष, अपनी कमियां देखोगे तो ग्लानि अनुभव होगी और उन्हें दूर करने के लिए प्रयत्नशील बनोगे। दूसरों के दोष देखना और साथ ही 'मिच्छामि दुक्कडं' का उच्चारण करना भगवान् जिनेन्द्र देव की आज्ञा का उल्लंघन तो है ही, स्वयं अपने साथ धोखा करना भी है। 'जो खामेई तस्य अत्थि आराहणा' जो क्षमा करता है वही आराधक है। हृदय में द्वेष भाव रख कर केवल मुख से क्षमापना करने वाला आराधक नहीं है।

अतः दूसरों के दोष देखने खोजने की प्रवृत्ति अब बन्द करो, अपने इस दुःस्वभाव को सुधारो, सच्चे आराधक बनो। जिस क्षण ऐसा हो जायेगा धरा पर सुधा वर्षा होगी, अमृत छलक उठेगा, जीव पारस्परिक स्नेह के अटूट धागे से बंध जावेंगे, दिव्य आशाएं नव पल्लवित होंगी, स्वप्न में भी क्षमा की मधुरिमा के दर्शन होंगे। ★

शेर-नज़्म

मिटा अन्धेर आलम से हुई आख़िर सहर पैदा।
सिद्धारथ के जो घर मे, एक हुए नूरे नजर पैदा॥
सहर से पेश्तर त्रिशला ने, चौदह स्वप्न जब देखे,
सिद्धारथ के हुई दिल में, खुशी की इक लहर पैदा॥
बुलाये ज्योतिषी दरबार में, सब हाल बतलाया।
निकाली सबने ताबीर हो जोगीश्वर पैदा॥
हिला जब इन्द्र सिंहासन हुआ मालूम देवों को।
शबे तारीक दुनियां में हुवा नूरे कंवर पैदा॥
श्री कुण्डलपुरी में देवता ताजीम को आये।
जमी पर देवताओं का हुआ गोया सहर पैदा॥
सितम की ख्वाब गफलत में पड़े थे जैन मतवाले।
इन्हें फिर से जगाने को हुआ इक वीर नर पैदा॥
लहर एक प्रेम की पैदा हुई संसार सागर में।
खयाले रहमों हमदर्दी हुआ बाथक दीगर पैदा॥
तेरी आमद हुई गोया चमन मे फिर बहार आई।
हुई गुलहाय रंगारंग में बूए अतर पैदा॥
तेरी तालीम कुछ ऐसी रसीली और मुन्तर है।
कि जिससे संगदिल पर भी दया का हो असर पैदा॥
तेरा शुभ नाम जब आया जबां पर अय मेरे स्वामी।
दहन में अय रतन फिर हो गई सीरो शकर पैदा॥

श्री सौभाग्यचन्द लोढा के संग्रह से साभार

अनुपम-प्रेम

श्री शान्तीदेवी लोढा बी ए जयपुर

प्रेम हृदय का अनुपम धन है, तन से कैसा नाता ?
मन से मन का मिलन जगत में, शुद्ध प्रेम कहलाता।

विश्व प्रेम मे पागल होकर, जो प्रभु गुण है गाता,
जग के ताप-शाप से वह तो शीघ्र मुक्त हो जाता।

आशातृष्णा नष्ट न होगी, जब तक चाह रहेगी,
क्षणिक सुखो के मिट जाने पर, केवल आह रहेगी।

नाशवान हैं सभी वस्तुए क्षण भगुर है जीवन,
शाश्वत है प्रभुनाम, यही है एक अमूल्य परम धन।

आश्रय जिसने लिया प्रभु का, कभी निराश न होगा,
यह है ऐसा प्रेम कि, जिसमे कभी वियोग न होगा।

कर्मों के बन्धन टूटेंगे मन की ग्रन्थि खुलेगी,
प्रीति चिरन्तन रहे, अशान्ति न कभी हृदय मे रहेगी।

प्रभु प्रेम की अग्नि हृदय के सभी विकार जलाए,
कुन्दन सा बन जाय हृदय मन मैल सभी मिट जायें।

जाग उठी यदि सुप्त कामना, दमन अतीव कठिन है,
मन पर विजय प्राप्त कर लो यदि, सुख ही सुख प्रतिक्षण है।

योग-वियोग विषाद-हर्ष में धीरज कभी न खोना,
लाभ-हानि, सुख-दुख, अपयश-यश मे भी विकल न होना।

लौकिक प्रेम अलौकिक होकर जब प्रभु को पावेगा,
विषय-वासना से ऊपर उठ, प्रभु मे रम जावेगा।

मृत्यु खडी हो सम्मुख आकर, किन्तु न भय खावेगा,
राग द्वेष से रहित प्राण, निज प्रभु को पा जावेगा।

भगवान महावीर एवं समय कीपु कार

सुशील कुमार वी कॉम, 'विशारद'

सकल विश्व का जय मंगल हो ऐसी भावना बनी रहे अमित परहित करने को मन सदैव तत्पर बना रहे सब जीवों के दोष दूर हो पवित्र कामना उर उनसे सुख शांति सब जीवों को हों–प्रसन्नता जनमन विलसे–यह हमारा सभी जैन मतावलंबियों का एवं मानव मात्र का परम सौभाग्य है कि इस वर्ष हम विश्व वंद्य भगवान महावीर की 2500वीं निर्वाण जयंति मनाने जा रहे है। यह अवसर हमारे जीवन में प्राप्त हुआ है यह परम पुण्य का कारण है।

भगवान महावीर ने उस काल की दशा एवं आने वाले समय को ज्ञान द्वारा देखकर जो सिद्धांत प्रतिपादित किए एवं उनकी सूक्ष्म व्याख्या की वह अद्वितथ है। अद्वितीय मात्र शब्दों की व्याख्या में नहीं–मानव मात्र के कल्याण का मार्ग जिससे प्रशस्त हो वह व्याख्या उसमें है। इसलिए अद्वितीय है। आज की व्यैक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय जन चेतना एवं उनसे परिलक्षित जीवन मूल्य अपनी जो दिशा बदल रहे हैं–वह प्रबुद्ध, चिंतनशील महात्माओं एवं व्यक्तियों को बहुत कुछ समझने को, सोचने को विवश करती है।

ऐसे समय में भगवान महावीर के अहिंसा, अपरिग्रह एवं अनेकांत–वाद के प्रमुख सिद्धांत अंधकार में ज्योति स्वरूप हमारे सामने आते हैं।

आज इस सदी की मानव की बहुत समस्याएं अर्थ के केन्द्र बिंदू पर आधारित हैं। इस समय मुझे कुछ पंक्तियां याद आती है–'Moralety alone could bring peace & happiness in the world. The crisis in the world was not merely due to conflict between prosperity & poverty but because of prosperity at the cost for morality' आज मानव के सारे मूल्य अर्थ से प्रेरण्य पाते हैं यह निराशापूर्ण स्थिति हैं। अर्थ संग्रह की आपाधापी–हिंसा को अपने साथ लाती है। जब हिंसा का प्रारम्भ हो जाता है तो सब समाजिक एवं राष्ट्रीय व्यवस्थाएं चरमराने लग जाती है और एक अराजकता की स्थिति का सूत्रपात हो जाता है। दुर्भाग्य से आज हम उसी दौर से गुजर रहे हैं। जब हिंसा से समस्याओं के हल का मार्ग खोजने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलने लगता है तो अनेकांतवाद का महत्व ही क्या ? दूसरे का दृष्टिकोण न समझकर अपनी बात को येन केन प्रकारेण यहां तक हिंसक तौर तरीकों से दूसरों पर लादने का विचार होता है वहां शांति एवं प्रेम का प्रादुर्भाव हो कैसे ?

इन सब कि विस्तार में न जाकर हम कारण की पकड़ करे तो संभवतः हमारा मार्ग प्रशस्त हो। जीवन के मूल्यों को बनाने एवं बिगड़ने में राजनैतिक विचारधारा अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। राजनैतिक विचारधारा को प्रतिपादित करने वाले तथा कथित राजनीतिज्ञ येन केन प्रकारेण, छल एवं छद्म की नीति से अपने स्वार्थो के कारण अनायास हो समाज को, राष्ट्र को संघर्ष की ओर ले जाते हैं।

राजनीति पर जब एक धर्म नीति का नियन्त्रण (याने सब शक्ति मान से भय) रहता है सब ठीक चलता है। परन्तु आज धर्म निरपेक्षता के शब्दों की आड में धर्म नीति अपना प्रभाव राजनीति पर खोती जा रही-और कुछ भी बनाए नहीं बन रहा। जब बाड ही खेत को खा रही हो खेत का रक्षक कौन ? राष्ट्र को लक्ष्य में न रखकर जिस प्रकार की अनुशासनहीनता, अर्थ एव सत्ता की आपाधापी शीर्ष मे बढ रही है वह साधारण नागरिको के भी जीवन मूल्यो मे बदले यह निश्चित है।

इससे पूर्व कि हम अधिक अधकार मे धकेले जाए और हमारा प्रजातन्त्र खतरे में पड जाय-चारित्रिक, प्रभावशाली धर्म गुरुओ को विशेषकर जैन धर्म गुरुओ को समय पर अपनी जवाबदारी से च्युत नही होना चाहिए। अपने तनिक मतभेदों को भुलाकर दिशाहीन राजनीतिज्ञो को-वर्तमान सारे सदर्भ मे अच्छी तरह साच विचार-कर स्पष्ट दिशा एव उद्बोध देना चाहिए। यही इस कठिन समय मे भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित सिद्धातो को जन जन में जागरण करने की अनमोल कसौटी होगी। □

महावीर वचनामृत

श्री शिखरचन्द पालावत

(1) प्राणी मात्र को अपनी जिन्दगी प्यारी है। सब को सुख अच्छा और दुख बुरा लगता है। जीवन प्रिय है, वध अप्रिय है। इसलिए कोई किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करे। धर्म में सब में पहला स्थान अहिंसा का बतलाया है।

(2) अहिंसा, सयम और तप को पूर्णतया मानने वाले को देवता भी नमस्कार करते हैं यानी सर्वज्ञ जिन भगवान ने ज्ञान, दर्शन, चरित्र और तप को मोक्ष का मार्ग बताया है।

(3) जैसे जैसे लाभ होता है वैसे ही लाभ से लोभ की वृद्धि होती है और लोभ से सद्गुणों का नाश होता है।

(4) यत्नपूर्वक चले यत्नपूर्वक खड़ा होवे अथवा बैठे यत्नपूर्वक सोवे वो भोजन करे वो भाषण करे वो जीव पाप कर्म को नहीं बाधता।

(5) क्रोध से प्रीति का नाश होता है, मान अभिमान से विनय का नाश होता है, माया से मित्रता का नाश होता है। और लोभ से सभी सद्गुणों का नाश होता है।

अत शान्ति से क्रोध को, नम्रता से मान को, सरलता से माया को एव सन्तोष से लोभ को जीतना चाहिये।

त्यागवीर भगवान महावीर

लेखक—श्री अगरचंदजी नाहटा, बीकानेर

जैनधर्म के अनुसार काल अनन्त है। उत्थान, पतन एवं परिवर्तन का चक्र निरतर चलता रहता है। परिवर्तन को प्रधानता देते हुए कालचक्र को दो भागों मे बॉट दिया गया है, उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी। इनमे से प्रथम में क्रमश: विकास होना है और दूसरे में ह्रास। वर्तमान काल अवसर्पिणी काल है। इसके प्रारम्भ मे मानव जीवन भोग प्रधान था। यद्यपि उस समय भोगोपभोग के साधन बहुत ही सीमित थे पर उस काल के मानव त्याग व धर्म को अपना नहीं सके थे। इसलिए उमे भोगभूमि का काल कहा जाता है। इसके पश्चात् यद्यपि भोगोपभोग के साधन पूर्वापेक्षा बहुत अधिक आविष्कृत, प्रादुर्भूत हुए पर साथ ही उनको त्यागने वाले महापुरुष भी अनेक हुए। प्रारम्भिक तीनों आरों मे मनुष्य का जीवन एक प्राकृतिक ढाँचे मे ढ़ला हुआ सा था। जन्म के समय मे एक वालक और बालिका साथ ही उत्पन्न होते थे अत: उन्हें युगलिक कहा जाता है। वे प्रकृति की छाया म बड़े होते और स्त्री पुरुष का व्यवहार (संगम—काम भोग) करते। उनके खान—पान वस्त्रादि की आवश्यकताएँ पूर्ण हो जाती इसलिए उन्हें अन्य काम या श्रम करके उत्पादन करने की आवश्यकता नहीं रहती। जैन मान्यता के अनुसार आज भी इस विश्व मे कई क्षेत्र ऐसे है जिन्हे युगलिको की भोगभूमि की संज्ञा प्राप्त है। त्याग मार्ग के प्रथम पुरस्कर्ता तीसरे आरे के अन्त में भ० ऋषभदेव उत्पन्न हुए। उन्होंने युग की आवश्यकता के अनुसार विवाहादि के सम्बन्धों में परिवर्तन किया। राजनीति, विद्या, कला का प्रवर्तन किया। कृषि, असि, मसिका व्यवहार होने के कारण तव से यह क्षेत्र 'कर्म भूमि' कहलाने लगा। प्राकृतिक साधनो वृक्षों के फल की कमी और आवश्यकताओं की वृद्धि द्वारा जो लोक—जीवन मे असंगति एवम् असुविधा उत्पन्न हो गई थी उसका समाधान भगवान ऋषभदेव ने किया, अत: वे सर्वप्रथम 'राजा' व लोक-नेता कहलाये। गृहस्थी भोगी जीवन के अनन्तर उन्होने त्यागमय जीवन को अपनाया और सर्वप्रथम त्याग का आदर्श उपस्थित कर जनता को उसकी ओर आकर्षित किया। त्याग के प्रति आस्था रखने वाले श्रावक—श्राविका साधु—साध्वी इन चतुर्विध तीर्थ संघों के स्थापक होने से वे प्रथम तीर्थंकर कहलाये। उनकी भव्य एवम् उदात्त परम्परा में अन्य २२ तीर्थंकरों के हो जाने के वाद २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर हुए। उनके पश्चात् अन्य कोई तीर्थंकर इस अवसर्पिणी काल मे इस भरत क्षेत्र मे नही होने के कारण वे चरम तीर्थङ्कर कहलाते है।

भगवान महावीर का जन्म नाम वर्द्धमान था, पर उनकी अद्भुत धीरता की ख्याति इतनी अधिक वढ़ी कि वर्द्धमान नाम केवल शास्त्रों मे ही सीमित रह गया, प्रसिद्धि 'महावीर' नाम को ही मिली। भारतीय संस्कृति मे वीर शब्द केवल रणवीर के लिए ही प्रयुक्त नही होता, अपितु दान एवम् त्यागादि धर्मो मे प्रकर्षता करने वाले भी दानवीर से सम्बोधित किए जाते हैं। महावीर का तप भी महान् था, अत: उन्हे तपवीर भी कहा जा सकता है। दीक्षा के पूर्व १ वर्ष तक निरन्तर दान देते रहने से

'दानवीर' तो थे ही, पर दान एवम् तप दोनो का समावेश त्याग मे ही किया जा सकता है अत मैंने प्रस्तुत लेख के शीर्षक मे उनके आगे त्याग वीर विशेषण रखा है। भगवान महावीर की आदर्श त्याग-वीरता का संक्षिप्त विवरण उपस्थित किया जा रहा है।

यह शरीर भोगो के द्वारा उत्पन्न होता है और उन्हीं से बढता है अत जीवन मे पौद्गलिक भोगों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। आहार, मैथुन आदि को जीवों की प्राकृतिक आवश्यकताएँ भी कहा जा सकता है। क्योंकि इनके बिना जीवन चल नहीं सकता, टिक नही पाता पर बंधन का कारण होने से भोग मोक्षमार्ग का विरोधी है। यह संसार इन भोगो की आसक्ति पर ही आश्रित या आधारित है। इसलिए महापुरुषो ने भोग-रूपी कीचड से ऊपर उठकर त्याग को प्रधानता दी। जीवन धारण के लिये खान-पान का उपयोग जितने परिमाण म अनिवार्य है उसको अनासक्ति पूर्वक ग्रहण करते हुए भोगोपभोगो को घटाते जाना और त्याग की ओर बढते जाना ही आध्यात्मिक जागृति है। विषय भोगो का आदर पौद्गलिक आसक्ति है। जहाँ तक हमारा देहाध्यास है आत्मा गौण रहेगी। भोगो को बन्धन का कारण एवम् त्याग को मुक्ति का मार्ग बतलाया है।

वैदिक संस्कृति मूलत यज्ञ प्रधान थी पर श्रमण संस्कृति के प्रभाव से उसमे भी संन्यास या त्याग मार्ग को सर्वोच्च स्थान देना पडा यद्यपि उसमे ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ आश्रम के बाद त्याग को धारण किए जा सकने का विधान है। जैन संस्कृति मे त्याग-निवृत्ति प्रधान है ? जो व्यक्ति संन्यास धारण नहीं कर सकते, वे गृहस्थ धर्म अणुव्रतो का पालन करें, यह विधान होने पर महत्त्व त्याग को ही दिया गया है। अणुव्रती, गृहस्थ की साधारण कोटि है। अणुव्रती ही गृहस्थ जीवन का वैशिष्ठ्य है। व्रत ग्रहण से ही त्याग मार्ग आरम्भ होता है। वैसे वस्तुओ की अप्राप्ति मे या अनिच्छा पूर्वक भी त्याग होता है। पर वह व्रत नहीं है। व्रत को आंशिक रूप मे धारण करने वाले देश विरत श्रमणोपासक या श्रावक कहलाते है और व्रतों को पूर्ण रूप से धारण करने वाले 'महाव्रती' होते हैं। आंशिक त्याग ही देश विरत या अणुव्रत है।

भगवान महावीर ने गृहस्थावस्था मे ही त्याग को अपना लिया था। अपने माता-पिता के स्वर्गवास के अनन्तर उन्होंने जब संन्यास ग्रहण की भावना व्यक्त की तो उनके बडे भाई नन्दीवर्धन ने उन्हें रोका। वे उनके अनुरोध से दो वर्ष और घर मे रहे पर अनासक्त साधु की तरह। पिछले एक वर्ष में तो उन्होंने प्रतिदिन दान दिया जिसे साम्वत्सरिक दान कहा जाता है। दो वर्ष पूरे होते ही तीस वर्ष की पूर्ण यौवनावस्था मे भगवान महावीर ने अणगार धर्म को स्वीकार किया और निग्रन्थ बने। कुटुम्ब परिवार, वस्त्राभूषण, धन, जन भूमि आदि समस्त बाह्य पदार्थों एवम् देहासक्ति आदि आभ्यन्तर परिग्रह के त्याग को स्वीकार किया। उनके श्रमण होने का सर्वप्रथम प्रतिज्ञा वाक्य यह है "करेमि सामाइय, सव्व सावज्ज पच्चक्खामि" अर्थात् उन्होंने सम-भाव को स्वीकार स्वयम् सर्व सावद्य पाप कर्मों को त्याग करने की प्रतिज्ञा ली। पाच इन्द्रियों के विषय भोग एवम् धन, परिवार, शरीर की ममता सावद्य पाप होने से महावीर निर्ग्रन्थ बने। उनका परित्याग बहुत ही विलक्षण एवम् उच्च कोटि का था। श्रमण होने के बाद उन्होने कभी भी अपने परिवार की सुधि नहीं ली, राजमार्गों की ओर कभी मुडकर नहीं देखा। जन्मभूमि एवम् भाई पुत्री आदि स्वजन परिजनो का तनिक भी मोह नहीं रक्खा, परिग्रह का त्याग इतना उच्चकोटि का किया कि शरीर निर्वाह के लिए आवश्यक वस्त्रादि का भी सर्वथा परित्याग करके वे पूर्ण दिगम्बर बन गए। इतना ही नहीं उन्होंने अन्न-पान आदि आहार को त्याग कर उग्र तप को अपनाया।

साधनावस्था के १२।। वर्षो में पूरे वर्ष भर (३६० दिन भी) उन्होंने आहार ग्रहण नही किया, शीत-ताप आदि प्राकृतिक शारीरिक कष्टो को सहन किया, साथ ही देव मनुष्य, तिर्यंच के दिए हुए कठोर एवम् मरणान्तक कष्टों को भी समभाव से सहा। यह उनके देहासक्ति परित्याग की सर्वोच्च स्थिति थी। इस प्रकार उन्होने मोह ममत्व का सर्वथा त्याग कर त्यागवीर का आदर्श उपस्थित किया।

वास्तव मे गुणो का उत्कर्ष अवगुणों के त्याग के विना सम्भव नही। इसलिए धर्म के दो रूप माने गए है—विधि और निषेध। अमुक काम करना चाहिए, इस विधान के साथ उससे विरोधी अमुक काम नही करना चाहिए, ऐसा निषेध रूप धर्म (शिक्षा) का सम्वन्ध जुडा हुआ है। जैनधर्म मे तो निषेध को विधि से भी अधिक महत्त्व दिया गया है। जैसे हिंसा के त्याग रूप धर्म का नाम ही अहिंसा है। इसी तरह असत्य, चोरी, मैथुन, परिग्रह के त्याग की प्रतिज्ञा भी हिंसा, मृषा, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह-विरमण आदि शब्दो द्वारा की जाती है। "विरमण" अर्थात् विराग लेना, त्यागना पाप कार्यो से विरत होना ही है।

हेय, ज्ञेय, उपादेय इस त्रिपुटि रूप विवेक ज्ञान मे त्यागने के योग्य पापों के त्याग का विधान 'हेय' शब्द मे सूचित है, मन की चंचलता त्यागे विना ध्यान नही होता। ध्यान की साधना करने वाले को बोलना छोडकर मौन रहना पडता है एवं पद्मासनादि द्वारा काया की अस्थिरता का त्याग जरूरी होता है। जैन धर्म में मन, वचन, काया की गुप्ति का विधान है। उसका तात्पर्य यही है कि इन योगो को अपने वश मे किया जाय उन्हें बुरे कार्यो मे हटाया जाय। सामायिक करना इसी विधि वाक्य के साथ ही विशेष रूप से सर्व-सावद्य योगों के प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा की जाती है। आवश्यकों मे प्रत्याख्यान तो त्याग का ही जैन पारिभाषिक पर्यायवाची शब्द है, वैसे कायोत्सर्ग मे भी देहाध्यास के त्याग का भाव ही प्रधान है। प्रतिक्रमण का अर्थ है पाप स्थानो से पीछे मुडना। उससे भी अठारह पाप स्थानों के त्याग का ही भाव स्पष्ट है। दस श्रमण धर्मों मे क्षमा आदि धर्म हे। उनमे भी क्रोध का त्याग क्षमा, माया का त्याग-संतोष, परिग्रह का त्याग रूप अकिंचन धम है और त्याग को स्वतन्त्र धर्म भी माना है। इस प्रकार दोषों या पापों का त्याग ही धर्म है। असत् अकुशल कर्मो को छोड़ना और सत् कुशल कर्मो का करना ही तो धर्म है। मोक्ष मार्गत्रय मे मिथ्यात्व का त्याग ही सम्यक्त्व है। इच्छाओ का निरोध त्याग तप है। पौद्गलिक संग के निवारण से ही आत्म-स्वरूप की उपलब्धि होती है। विभाव का त्याग ही स्वभाव रमणता

है। स्वार्थ का त्याग किए बिना परमार्थ नहीं सधता। कर्मो का त्याग ही तो मुक्ति है। आठ कर्मों का नाश होने पर ही तो मुक्ति है। आठ कर्मों के नाश होने पर ही आत्मिक गुणो का पूर्ण प्रगटीकरण होता है। भारतीय साधना प्रणाली मे सत् प्रवृत्ति और असत् निवृत्ति इन दोनो को धर्म की सज्ञा दी गई है। जैनधर्म में सत्प्रवृत्ति से काय ने इन दोनो को धर्म की सज्ञा दी गई है। जैन धर्म तो निवृत्ति प्रधान धर्म माना जाता है, अर्थात् उसमे तो त्याग ही प्रधान है।

भारतीय सस्कृति मे त्याग को आदरणीय एवम महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। बडे से बडे भोगी राजा, महाराजा, चक्रवर्ती तक एक अकिंचन-सन्त महात्मा के चरणों मे झुकते रहे हैं। भोगियों का कोई नाम ही नहीं लेता जबकि त्यागियो का नित्य स्मरण व जप किया जाता है। जो व्यक्ति अपने ही स्वार्थ या भोगो मे मस्त रहता है उसे कोई भी श्रद्धा से नही देखता। श्रद्धा भाजन वही बनता है जो दूसरे के भले के लिये अपने स्वार्थ का परित्याग करें। त्याग दोषो का होता है, गुणो का नही। जितने अ शो में दुर्गु ण, दुर्व्यसन असत् प्र ग व असत् प्रसगा का त्याग किया जाएगा, उतना ही गुणों का विकास होगा। इस प्रकार भगवान महावीर जैसे आदर्शत्यागी से ही हमे त्याग की महान् शिक्षा ग्रहण कर अपने जीवन को धन्य बनाना चाहिए। पर ध्यान रहे हमारा त्याग दिखाऊ न हो, किसी दबाव से न हो। बाहर की वस्तुओं को त्याग देने पर भी यदि अन्तर मे उनकी इच्छा बनी रहती है तो वह वास्तव मे त्याग नहीं। त्याग और वैराग्य का घनिष्ट सबध है। वैराग्य मे पुन शिथिलता आना सभव है। भगवान महावीर की स्मृति रूप जयन्ती मनाते हुए हम त्याग-धर्म को अधिकाधिक अपनायें यही जैनी होने या जयन्ती मनाने की सार्थकता है। ●

भस्म ग्रह उतर रहा है

लेखक–श्री हीराचन्द वैद

एक युग से पर्वाधिराज महापर्व की आराधना करते वक्त मुनि प्रवरों के द्वारा यह सुनते आ रहे थे कि चरम तीर्थंकर शासनपति भगवान महावीर का जब निर्वाण हुआ था तब देव राज इन्द्र ने यह विनती की थी कि आपकी राशि पर इस वक्त भस्म ग्रह है इसलिये कुछ क्षणो के लिये आप आयुष्य और बढाले तो जैन शासन पर इसका असर पडने से बच जावे। उस वक्त शासनपति महावीर देव ने फर्माया था कि देवराज इसमे मैं भी शक्य नहीं हूँ ! शास्त्र बतलाते रहे कि यह २००० वर्ष तक शासन पर छाया समाज के उत्थान, एकता आदि मे बाधक रहेगी। इस कथन को सुनते सुनते और समय को गिनते गिनते पीढिया पूरी हो गईं और हम भाग्यशाली रहे कि हमने उस काल को पूर्ण होते देखने का समय पाया।
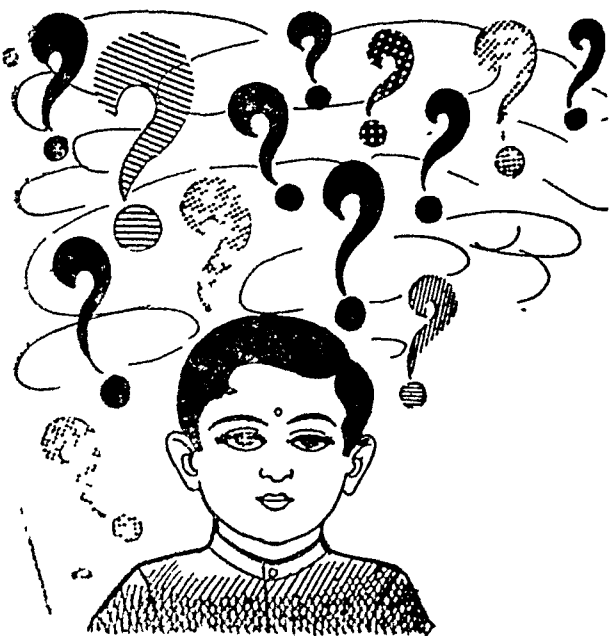
गत १०–२० वर्षों से तो शासन के कार्य में रुचि रखने वाले, धर्मभीरू एवं श्रद्धावान व्यक्ति इस समय की बेताबी से इन्तजार कर रहे थे। कारण कि आयुष्य का कुछ पता नही कब जवाब दे जावे और यदि वह महान् समय हमारे जीवन में देखने को मिल जावे तो हम किसी मायने में भी उन पूर्वजों से कम भाग्यशाली नही रहेंगे जिन्होंने भगवान महावीर के जीवन काल में जन्म लेकर अपने को कृतकृत्य समझा था।

हमारे समाज ने गत २५–५० वर्षो मे जहा अपने पुराने इतिहास को पीछे छोड़ कर नया इतिहास बनाया है वहां हमने अपने कृत्यों से समाज में से श्रद्धा और धर्म भावना को बहुत पीछे भी धकेल दिया है, महान प्रभावी आचार्यों की शृंखला–जैन शासन की ध्वजा को फहराने वाले उत्सव महोत्सव, प्रतिष्ठायें, मंदिर उपाश्रयों के निर्माण, साहित्य के निर्माण–विभिन्न नये प्रदेशों में धर्म का प्रचार, जैन इतिहास के सम्बन्ध में फैली हुई विदेशों मे गलत धारणाओं को सुधरवा कर कई ऐसे कार्य इस जैन समाज ने किये हैं जिससे हम अपने को गौरवान्वित मान रहे हैं पर इसके विपरीत दूसरे पहलू में हम जब तिथि विवाद, साधारण देव द्रव्य विवाद, संगठन के बजाय विगठन, नई पीढ़ी में संस्कारों की कमी–तप त्याग की भावना की कमी, कंचन कामिनी के त्याग के बाद भी कीर्ति का अत्यधिक मोह, चारित्र का ह्रास-तथा शास्त्रों को शस्त्र बना कर जो वातावरण हमने बना लिया है उससे भीतर का धर्म और अन्तर की श्रद्धा कमजोर ही हुई है–बलवती नहीं बनी है।

इस तरह के अनेक काय ऐसे हो सकते थे जिनको बिना किसी विरोध के हाथ में लिया जा सकता था और इसमें कोई दो राय नहीं कि आज भी इस शासन मे इतने समथ आचाय व साधु हैं जो इन सब योजनाओ को पूरी करा सकते थे। साथ ही यह भी होता कि इस अवसर पर हमारे साधुओ की योग्यता के प्रसार का अवसर भी मिल जाता।

पर यह सब होता तब जब अपनत्व का मोह छोड कर शासन के प्रति, महावीर के प्रति हमारी रुचि जागती। मैं यह भी स्पष्ट कर दू कि इस महोत्सव के निर्माण के लिये बनी समिति ने जो कार्यक्रम मे दिया है उससे सब सहमत हों यह जरूरी नहीं है-पर इसका मतलब क्या यह है कि सारे कायक्रम शासन विरोधी ही हैं। आज जिस तरह का प्रचार किया जा रहा है एक ही साहित्य एक ही व्यक्ति के पास 3 और चार दफा भेजा जा रहा है लाखो रुपया छपाई-कागज और डाक टिकटो मे व्यय किया जा रहा है क्या यही धार्मिक कृत्य इस अवसर के अनुरूप रह गया है। कई राज्यों मे अमुक दिनो के लिये जीव हिंसा नही होगी, अमुक दिनों के लिये शिकार बन्द रहेगी, मद्य मास की बिक्री नही होगी। बलि नही होगी-क्या ये सार काय भी निन्दनीय हैं? क्या इनसे कोई लाभ नही होगा? जीव हिंसा नही बचेगी? वास्तव मे तो हमारी स्थिति यही हो रही है कि सर में गज की बीमारी हो जाने पर उसे सर काट लेने की ही सलाह दे दी जावे। नये सिर फिरे लोग धर्म की बातों का व रस्मो का विरोध करें वह तो समझ मे आसकता है पर शासन के दिग्गज, महान विद्वान, अग्रोड वक्ता जब अपनी शक्ति इन कार्यों में लगा रहे हैं तब विचार तो आता है, क्या जैनधर्म के सिद्धान्त इन्ही आत्माओं म उतरे है? और क्या जो यह उतरा है वही जैनधम है?

बडी श्रद्धा है उन सब मुनि भगवन्तो मे भी जो आज भगवान महावीर निर्वाण शताब्दि क आयोजनो का विरोध करते हैं। जन शासन की वे अमूल्य निधिया हैं, पर क्या उनका यह दृष्टिकोण भस्म ग्रह का जाते जाते असर ही तो नहीं दिखा रहा है। समय तो बहुत निकल चुका है पर अभी भी शेष है-सारा निकल नहीं गया है। शान्त दिल से वे विचार करें-केवल साधु की स्थिति मे रह कर ही विचार न करें-श्रावको की स्थिति को भी देखें और कोई मार्ग निकालें और वह सबसे सुन्दर माग यही हो सकता है विरोध छोड कर सृजन का। वे समाज को मागदशन दें-काय क्रम दें-सारा समाज उनका साथ देगा। एक चमत्कार हो जावेगा-भस्म ग्रह का असर भस्म हो जावेगा-समाज मगल हो जावेगा-हमारी आवाज गूज उठेगी, हमारी ताकत बन जावेगी। सरकार को भी हमारी बात सुननी पडेगी-हम जैनेतर जनता पर भी प्रभाव डाल सकेंगे। नई लहर आवेगी और वास्तव मे हम महावीर के सच्चे भक्त बनने के हकदार हो सकेंगे।

इसे बात और इज्जत का प्रश्न न बनावें। आपके कायक्रम देते ही हर जनता आपके साथ होगी आपका यश और कीति और बडेगी-घर घर मे प्रसन्नता व्याप्त हो जावेगी, लाखो रुपयो के खच से जो अनुपयोगी कार्य हो रहा है उसकी जगह निर्माण का कार्य होगा।

और तब हम समझेंगे शास्त्र सही थे-भस्मग्रह जा चुका है हमारे शासन की जाहोजलाली का समय आ गया है। हमारी कीर्ति विश्व मे व्याप्त होगी और जय बोली जायेगी महावीर की सारे विश्व मे।

सांवत्सरिक विचार

लेखक–पं० भगवानदास जैन

सांवत्सरिक जैनमतावलबियों का एक महापर्व माना जाता है। कारण यह है कि उस दिन एक वर्ष में जो कुछ भी किसी जीव के साथ किसी प्रकार का अपराध मन, वचन और काया से जान अथवा अनजान से हुआ हो उसका प्रायश्चित किया जाता है। उसमें भी किसी व्यक्ति विशेष के साथ किसी भी प्रकार का अपराध हुआ हो उस व्यक्ति के साथ अवश्य क्षमा याचना की जाती है जिससे मैत्रीभाव की वृद्धि होती है और कषायों की मंदता हो जाने से शुभगति प्राप्त होती है। ऐसा यह महापर्व गच्छ का व्यामोह छोड़ करके एक ही दिन मनाया जाय तो अधिक लाभ का कारण हो सकता है।

जैनमतावलंबियों का नवीन वर्ष आषाढ शुक्ल पूनम के बाद श्रावण कृष्ण एकम से चालू होता था जो अभी भी बिहार प्रांत में माना जाता है। इस पंचराग के अनुसार श्रावण कृष्ण एकम से पचासवें दिन सांवत्सरिक पर्व मनाना ऐसा कल्पसूत्र मे लिखा है। प्राचीन समय में पंचांगों का प्रचलन नहीं होने से कोई तिथि वार और नक्षत्र का ज्ञान सार्वजनिक समझ मे नही आने से सूत्रकार ने पचासवाँ दिन लिख दिया है। परन्तु मालूम होता है कि—सूत्रकार को नक्षत्र मान्य होगा। क्योंकि भगवान् महावीर स्वामी स्वाति नक्षत्र के दिन मोक्ष पधारे थे, उस दिन चतुर्मास में किस समय अनुकूल आता है, ऐसा समय करके सूत्रकार ने पचासवां दिन मुकरर कर दिया, इस रोज स्वाति नक्षत्र आजाता है। जो तिथि की मान्यता होती तो सूत्रकार पंचमी तिथि ऐसा अवश्य लिखते जिससे माना जाता है कि सूत्रकार को नक्षत्र मान्य होना चाहिये। जबसे पंचागों का प्रचलन होने लगा तब से प्राचीन जैनाचार्यों ने पंचमी निश्चित की जिससे सब जान सकें। बाद में कुछ प्राचीन आचार्यो ने चौथ की संवत्सरी मान्य की। इस प्रकार जैन पंचांग के अनुसार था वह बराबर था क्योंकि–श्रावण या भाद्रपद मास अधिक होता नहीं था. एवं तिथि का भी वध घट होता नहीं था, जिसे सूत्रकार ने पचासवां दिन निश्चय किया यह सब मान्य होगया। परन्तु आजकल जैनपंचांग का अभाव हो जाने से लौकिक पंचाग के अनुसार अपने धार्मिक सब काम करते हैं. जिससे अनेक मतभेद होने लगे। इसलिये सब आचार्यो की सहमति लेकर एक दिन मुकरर कर दिया जाय तो भगवान महावीर स्वामी की २५००वी जयंती का स्मरण रहा करेगा।

भगवान महावीर के शासन का सार्वजनीन स्वरूप

लेखक—भवरलाल पोल्याका, जैनदर्शनाचार्य,
साहित्यशास्त्री, जयपुर

आत्म स्वभाव ही धम है । धम और आत्मा इन दोनो को पृथक् नही किया जा सकता । जहा धर्म है वहा आत्मा है और जहाँ आत्मा है वहा धर्म है । धम से ही आत्मोत्थान सभव है । धम से ही आत्मा निमल होकर पूज्य बनता है । जिस आत्मा मे जितना अधिक धम उतरता है उतना ही आत्मिक गुणो का विकास होता है और उतने ही अशो मे वह पूज्य बनता जाता है । आत्मा के गुणो का पूर्ण विकास ही आत्मा का चरम उत्थान है और आत्मिक गुणो का अवरोध ही पतन । अत भगवान् महावीर ने कभी भी किसी जाति विशेष मे जन्म लेने के कारण किसी को पूज्य नहीं बताया, श्रेष्ठ नहीं माना । उनके दर्शन मे श्रेष्ठत्व का मापदण्ड मानव का आचार है । जिसका आचार ठीक है वह फिर किसी जाति अथवा कुल मे उत्पन्न हुआ हो पूज्य है, सम्माननीय है । मानव ही नही देवता भी उसकी पूजा करते हैं । भगवान् महावीर ने डके की चोट घोषणा की थी, 'गुणा पूजास्थान न च लिग न च वय' उत्तराध्ययन सूत्र मे कहा है—

> कम्मुणा बम्भणो होइ कम्मुणा होइ खत्तिओ ।
> वइसो कम्मुणा होइ, सुद्दो हवइ कम्मुणा ।।

अर्थात् —मानव अपने कम से, आचरण से ही ब्राह्मण बनता है, आचरण से ही क्षत्रिय बनता है, आचरण से ही वैश्य होता है और आचरण से ही शूद्र होता है । भाव है ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कुल मे उत्पन्न होने से ही कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र नही बन जाता जब तक कि उसका आचरण तदनुकूल न हो ।

आचाय कुदकुन्द ने भी अपने दशन पाहुड मे कहा है—

> ण वि देहो वदिज्जइ ण वि य कुलो ण वि य जाइ सजुत्तो ।
> को वदमि गुणहीणो ण हु सवणो णेय सावओ होइ ।।

अर्थात्—न तो देह वन्दनीय होता है और न कुल तथा जाति ही वन्दनीय होती है। चाहे कोई श्रमण हो अथवा श्रावक हो, किन्तु यदि वह गुणों से हीन है तो वंदनीय नही है। भाव यह है कि केवल गुणवान् ही पूज्य, वदनीय है फिर चाहे वह किसी भी कुल, जाति, अथवा देह में उत्पन्न हुआ हो और चाहे वह गृहस्थ हो अथवा मुनि। गुणहीन किसी भी अवस्था में पूज्य नही हो सकता।

प्रसिद्ध तार्किक आचार्य समन्तभद्र ने अपने रत्नकरण्ड श्रावकाचार नाम के ग्रंथ में सम्यग्दर्शन जो कि आत्मा का गुण है, की महिमा का वखान करते हुए कहा है—

सम्यग्दर्शन सम्पन्नमपि मातंगदेहजं।
देवा देवं विदुर्भस्म गूढांगारांतरौजसम्॥

अर्थात्—यदि कोई चाण्डाल के घर में उत्पन्न हुआ है किन्तु उसका आत्मा सम्यग्दर्शन से सयुक्त है तो गणधर देवों ने इसे राख से ढके हुए अंगारे की उपमा देते हुए देवता के समान बताया है। इसी वात को उक्त आचार्य ने इसी ग्रंथ के निम्न श्लोक में और भी स्पष्ट किया है—

श्वाऽपि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकिल्विषात्।
कापिनाम भवेदन्या सम्पद्धर्माच्छरीरिणाम्॥

अर्थात्—यदि आत्मा में धर्म उतरा है तो कुत्ता भी देवता के समान पूज्य है और यदि धर्म नहीं उतरा है तो देव भी कुत्ते के समान है। यह धर्म ही है जिससे संसार की सारी सम्पत्ति और सारे वैभव प्राप्त होते हैं।

सागारधर्मामृत नामक ग्रंथ में पं. आशाधरजी ने भी इसी तथ्य की पुष्टि करते हुए घोषणा की है—

'जात्या हीनोऽपि कालादिलब्धौ ह्यात्मास्ति धर्मभाक्।'

कालादि लब्धि आने पर हीन जाति आत्मा भी धर्म का अधिकारी हो सकता है।

रविषेणाचार्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ पद्मपुराण में भी जाति की महत्ता को अस्वीकार करते हुए गुणों को ही कल्याणकारी बताया है।

न जातिर्गर्हिता काचित् गुणाः कल्याणकारकम्।
व्रतस्थमपि चाण्डालं तं देवा ब्राह्मणं विदुः॥

संसार में कोई भी जाति गर्हित (निन्दनीय) नहीं है, गुण ही कल्याण के कर्ता हैं। गणधर देवों ने व्रती चाण्डाल को भी ब्राह्मण ही कहा है।

पुराणो में इस प्रकार के सैकडो उदाहरण भरे पड़े हैं कि नीचातिनीच जाति में उत्पन्न होकर भी वहुत सी आत्माओं ने जैनधर्म को धारण कर स्व-पर कल्याण किया है। यमपाल चाण्डाल का कथानक तो जैनों मे वहुत ही प्रसिद्ध है। उसने पर्व दिनों में किसी का भी वध न करने की प्रतिज्ञा ली थी। अपनी इस प्रतिज्ञा के कारण उसे राजा का कोपभाजन वन कई यातनाएं सहनी पड़ी थी किन्तु वे यातनाएं उसे धर्मपथ से विचलित नहीं कर सकी और अन्त में वे लोकपूज्य हुए। चाण्डाल चण्ड

ग्रौर चाण्डाली दुर्गंधा के कथानक भी पुण्याश्रव कथाकोष, आराधना कथाकोष, हरिवंशपुराण आदि ग्रंथों से जाने जा सकते हैं। चाण्डाल साधु हरिकेश की कथा उत्तराध्ययन सूत्र मे है। अन्जन चोर, विद्युच्चोर, आदि पापी भी इस धर्म की शरण में आ संसार सागर के दुःखो से छुटकारा पाकर तर गए हैं जिनकी कथा प्रायः प्रत्येक स्वाध्याय प्रेमी जानता है। इसीलिए देवसेनाचार्य ने कहा है—

एहु धम्मु जो आयरइ बभणु सुद्दवि कोइ।
सो सावहु किं सावयह अण्णु कि सिरि मणि होइ ।।

अर्थात् जो इस धर्म का पालन करता है वह चाहे शूद्र हो अथवा ब्राह्मण, श्रावक ही है। नहीं तो क्या श्रावक के सिर मे कोई मणि लगी होती है।

लिखने का तात्पर्य यह है कि जैनधर्म एक ऐसा धर्म है जिसका पालन कोई भी बिना किसी भेदभाव के कर सकता है वह किसी जाति अथवा सम्प्रदाय विशेष की बपौती नहीं। वह तो सबके लिये खुला है। कोई भी इसके झण्डे के नीचे आकर सुख शांति का अनुभव कर सकता है और अंत मे अपना कल्याण कर सकता है। उसकी यही विशेषता उसे अन्य धर्मो से प्रधानता प्राप्त कराती है।

'प्रधान सर्वधर्माणां जैनं जयति शासनम्।

नारी संबोधन

श्री चम्पालाल कटारिया जयपुर

ओ!
भारत की नारी!
क्या तुम
गौरव अपना
भूल गई?
इसी धरा पर
जन्मी सीता
जो
थी सतियों में
सिर मोर
निर्भय होकर
दी जिसने
शील की खातिर
अरे!
धर्म की खातिर
अग्नि परीक्षा
और
कापी आग

मई
हिम सम शीतल
बना
कमल सिंहासन
बीच
सरोवर
देवो ने
बरसाये
फूल
बजाए बाजे
सब मिल
बोले
सीता की
जय
जय जय कार
हुवा
सबको
हर्ष अपार
उसी की तो

हो तुम
संतान
बनो
शील की खान
गुण निधान
रखो
धर्म की
आन
रहे
जिसमे
जाति की
शान
कहे मिल सब
धन्य धन्य
वीर संतान
धन्य धन्य
जिन धर्म
महान

समता सागर प्रभु महावीर

लेखक–धनरूपमल नागोरी
एम.ए.बी.एड., साहित्यरत्न

भगवंत परमात्मा प्रभु महावीर का समस्त जीवन प्रेरणादायक प्रसंगों से गुंथित है। कहीं से किसी भी प्रसग को ले लीजिए वह अपने आप में परिपूर्ण कथा है। ऐसा अद्भुत चरित्र है प्रभु महावीर का।

एक समय की बात। सुरेन्द्र का दरबार लगा था। चर्चा थी महावीर की अद्भुत समता की। देवगण अपने स्वामी की बात ध्यान से सुन रहे थे। उनकी बात सबको अच्छी लग रही थी। लेकिन ऐसा भी था एक देव, जिसके गले उनकी बात नहीं उतर रही थी।

वह उठा, उसने हाथ जोड़े। प्रार्थना की 'यदि आपकी आज्ञा हो तो परीक्षार्थ जाऊँ ?'

देवेन्द्र ने ज्ञान से जाना। संतप्त हृदय से स्वीकृति दी। पर उसपर अपना दुःख प्रगट नहीं होने दिया।

संगम नाम का वह देव तो चाहता ही यही था। उसे मन चाही आज्ञा मिल गई। चल पड़ा वह वहाँ से। गया वहाँ जहाँ समता सागर भगवान् कायोत्सर्ग में लीन थे।

महावीर को देखते ही दंभी देव ने नाना प्रकार के उपसर्ग देने शुरू किये। सर्प बनकर डसा। बिच्छू बनकर डसा।। मच्छर बनकर सारे शरीर को बीधा। हाथी बनकर सूंड से उछाला। परन्तु भगवन्त तो अचल, निश्चल मौन। उस पर लेशमात्र भी क्रोध नहीं। द्वेष नही। अप्रीति नहीं, अरुचि नही।

छह मास का समय व्यतीत होने आया। बुझता दीपक जैसे भभक-भभक कर बुझता है। अधिक प्रकाश करता है। अधिक जोश दिखाता है, वैसी ही स्थिति संगम की हुई। जब वह पूरी तरह थक गया, हार गया, हतोत्साही होगया निरुपाय हो गया, भगवान् को तप से डिगाने में, तो उसने अपना सारा उत्साह एवं बल बटोर कर एक बार पुनः आजमाया।

इसबार उस अभिमानी ने भयंकर अस्त्र का प्रयोग किया। भयानक कालचक्र की रचना कर उसे प्रभु पर दे मारा। कालचक्र का प्रहार साधारण न था। सुरेन्द्र ने जब जाना तो उसका हृदय कंपित हो उठा। विचार आया अब क्या होगा। वह अपने आपको संभाल नही पाया।

किन्तु दूसरे ही क्षण संभल गया। सोचा यह भगवान् की परीक्षा का समय नही। यह तो मेरी परीक्षा का काल है। अगर मैं थोड़ी भी कमजोरी दिखाऊँगा तो बना बनाया खेल बिगड़ जायेगा। यह विचार कर वह अत्यन्त कड़वी घूंट पी गया।

भगवत के जीवन वृत्त से बोध मिलता है कि, मद, अभिमान, अहता ऐसे भाव हैं कि जब ये मनुष्य मे विकसित होते हैं तो उसे निज के पद कर्तव्य का तनिक भी भान नही रहता और वह निकृष्ट स्थान पर पहुच जाता है। वास्तव मे है भी ठीक, क्योकि न्याय के साथ परिणाम, प्रयत्न के साथ फल, आघात मे प्रत्याघात और भावना के साथ फल मिलना ही है।

मद आत्मा का गुण नही है, क्योकि यह मानव प्रकृति मे भिन्न है। जिस मनुष्य पर मद, घमण्ड अभिमान सवार होता है तो विकल्प पदा करता है, विकल्प से विकलता उत्पन्न होती है, विकल्पता मे उपयोग हीन बनाते हैं, और उपयोग रहित मनुष्य निज पद से गिर जाता है। यह मदाध मनुष्य के लिये अनिष्टकारक है। इसका प्रभाव अन्य आत्मा के लिये हो तो मान लें परन्तु महान धर्म प्रवर्तक सर्वज्ञ परमात्मा होने वाले को भी मद के बुरे परिणाम ने नही छोडा।

भगवत ! महावीर का ससार पर अत्यन्त उपकार है और वे फरमा गये हैं कि जैनधर्म व्यक्ति गत नही है, इसका पालना, निभाना, मानना आत्मबल के ऊपर निर्भर है, यदि आत्मा शुद्ध नियम बद्ध रहे, और निज के आत्म बल पर खडा हो तो वह सच्चे सुख को पा सकता है। भगवत ने यही बताया है कि आत्मा बनी योगी तो सुख तुम्हारे पाँवो मे आ गिरेगा। इसकी साधना मे उन्होंने दो बात बताई मनुष्य नियम और सयम को समझ ले यह पूर्ण सुख की चाबी है। नियम और सयम धर्म के पाये हैं, सारी इमारत का यह शिलान्यास है। सुख की चाहना है तो दूसरे से भीख मत माँगो आत्मबली बनो, जो ससारी जगत को जीते वही जैन कहलाता है, आत्मा दूसरो के सहारे बडा बनना चाहता है सो नही बन सकता। शुद्धात्मा ही बली कहलाता है, जो कर्मवीर है वही अपने आपको उच्च पद पर ले जाता है, जो सुख के भिक्षुक हैं, और कर्महीन हैं वे आत्म सुख नही पा सकते। मृग समझता है कस्तूरी की सुगन्ध अन्यत्र है। परिमल के लिये भटक कर प्राण पूरे कर देता है, ऐसी हालत ही कर्महीन आत्मा की होती है। आत्मा मे अनन्त ज्ञान, दर्शन चारित्र है। क्यो नही शुद्ध चरित्री सयमधारी बनता। महावीर भगवत ने कहा कि मानव मे मानवता आ जाय तो वह नियम सयम पालन मे दृढ हो जाता है। अत शास्त्राभ्यास उपदेश जप तप सत्सग दान पुण्य ध्यान व्रत पच्चखाण सदाचार से आत्मा को शुद्ध बनाना चाहिए।

विषधर से भी भयंकर 'मानव'

लेखक—ईश्वरलाल जैन न्यायतीर्थ

एक साधक तेजस्वी मुखारविन्द. पर शान्तमुद्रा, साधना पथ का पथिक अपने साधना मार्ग पर अग्रसर था। शरीर साधना की ओर नही, आत्म साधना की ओर। न गर्मी की परवाह न सर्दी की चिन्ता, भयङ्कर परिषह और असह्य कष्टों की ओर ध्यान दिये बिना साम्यभाव से परिषहों को अपने पर झेलते हुए कर्मक्षय करने एव प्राणीमात्र के कल्याण में प्रवृत्त।

एक गाव से दूसरे गांव—ग्रामानुग्राम विहार करते हुए जब श्वेताम्बी नगरी की ओर बढ़े तो एक चरवाहे ग्वाले ने उधर जाते हुए देख कर विचार किया कि संत ऐसे पथ पर पदार्पण कर रहे है, जिधर जाने का परिणाम भयङ्कर होगा, इधर का मार्ग निरापद नही, इस ओर गया हुआ कोई भी मानव आज तक बच कर वापस नही आया, उस चरवाहे ने आगे बढ़कर साधक का मार्ग रोक कर प्रार्थना की—

"भगवन् ! इस दिशा मे तो एक भयङ्कर सर्प का वास है, उसकी विषाक्त फुंकार से मनुष्य तो क्या पल्लवित पेड़ पत्ते तक भस्म हो जाते है, प्रभो ! आप इधर से न जाइये। उस विषधर की फुंकार तो क्या ? उसकी दृष्टि ही मृत्यु का ग्रास बना देती है, दृष्टि पड़ते ही प्राण पखेरू उड़ जाते हैं, उसकी दृष्टि से ऐसा विष बरसने के कारण उसका नाम ही दृष्टिविष सर्प पड़ गया है, उसके श्वासोच्छ्वास मे विष व्याप्त है। महान् भयङ्कर है वह, इसलिये उसे चण्डकौशिक कहते हैं, वह किसी को जीवित नहीं छोड़ता। उसकी कल्पना से ही हृदय कांपता है, मेरी प्रार्थना है आप इधर से न जाइये।"

निर्भय वीर ने तो जैसे कुछ सुना ही नही, इन सब बातो का, अनुनय-विनय का भगवान पर कोई असर ही नहीं हुआ। दूसरे को जीवनदान देने वाले को मृत्यु का, क्या भय ? उन्होंने ज्ञान बल से उस जीव के उद्धार का सुअवसर देखकर प्रतिबोध के लिये उसी दिशा में ही कदम बढ़ा दिये। पहुंच गये उस विषधर सर्प की बाम्बी तक। मानव गंध आते ही विषधर को किसी के आने का आभास हुआ, उन्माद जागृत हुआ, तड़फड़ा उठा, यहाँ तक आने की हिम्मत करने वाला कौन ? भयङ्कर फुँकार मारता और विष की ज्वालाये फैलाता हुआ बाहर निकला, फुंकार से वायुमण्डल दूषित हो गया, उड़ते हुए पक्षी जमीन पर आ पडे, जहा तक फुंकार पहुंची वहाँ तक के हरे भरे पेड़-पत्ते भस्म हो गये। उसने जहर से भरी अपनी नजरें भगवान पर डाली और साथ ही जोर की फुंकार भी।

अरे ! यह कैसा मानव ? मेरी दृष्टि से तो कोई बच नही पाता, फुंकार से समाप्त हो जाता है, पर यह शान्त मुखमुद्रा में वैसे ही ध्यानमग्न खड़ा है, कोई असर ही नही हुआ मेरी दृष्टि और फुंकार का। आक्रोश और अधिक भयङ्कर हुआ, क्रोधोन्माद में तीव्रता आई, नही रहा गया, झपट कर डंक मार ही दिया भगवान के अंगुष्ठ पर, उड़ेल दिया अपना जहर !

है ! यह कैसा अद्भुत मानव मेरी बाम्बी पर निश्चल होकर खड़ा है ? और यह अंगुष्ठ से रक्त ? अरे ! रक्त नही—रक्त के बदले दूध की धारा ! और उसका यह मधुर स्वाद ! आश्चर्य !

भगवान वीर की प्रशान्त मुद्रा से करुणा की रसधारा बहती देखकर शान्त हो गया सारा क्रोध। भगवान की वाणी कान मे पड़ी—

"समझ! समझ!! चण्डकौशिक समझ!!! तू कहा से आया है? याद कर पिछले जन्म को! किन दुष्कृत्यो से यह दशा हुई है तेरी? समझ! और सभल!

कितना प्रभाव था उस आत्मस्पर्शी वाणी मे! कितना चमत्कार था उस मधुर ध्वनि में। चण्डकौशिक को अपने पिछले भव की तपस्वी जीवन की स्मृति–जातिस्मरण ज्ञान हो गया, सब समझ मे आ गया, क्यों हुई मेरी यह दशा? क्रोध और कषाय से मेरा हाल हुआ है यह, पूर्व की स्मृति मे आत्मग्लानि और पश्चाताप जागृत हुआ। प्रायश्चित का सकल्प किया और विषमय दृष्टि वाली आंखो को और जहर की फुकार मारने वाले मुख को वाम्बी मे-वाम्बी की मिट्टी मे दबा कर निश्चल हो गया आत्म-ध्यान में लवलीन हो गया।

इधर भगवान वीर भयङ्कर कहे जाने वाले मार्ग से होकर गाव मे जीवित पहुँच गये तो लोगो को आश्चर्य हुआ, सारे गाँव मे बात फैल गई, जिस भयङ्कर विषधर का आतङ्क फैला हुआ था उसने इस सत को कैसे जीवित छोड दिया है यह देखना चाहिए। गाव के लोग एकत्रित होकर दर्शन करने के लिये गये, वह अब चण्डकौशिक नही-नाग देवता हो गया है–पूजन के योग्य। दर्शन किया, दूध और घी चढाया, मिष्टान चटाकर पूजन किया। दूध, घी और मीठे मे चीटिया आकृष्ट हुई, चारो ओर चिपट कर उनके शरीर को ही काटने लगी, काट-काट कर छलनी कर दिया परन्तु अब सर्पाधिराज हिले डुले नहीं, क्रोध पर विजय प्राप्त कर चुके थे, अब शरीर की चिन्ता मे नही, आत्मा की चिता मे निमग्न थे, भगवान के उपदेशामृत पान के बाद शात भाव से परिषह वेदना को सहन कर सुधार लिया अपना भविष्य!

परतु भगवन्! हम मनुष्य?

हे वीर! हमने आपके इस जीवन प्रसङ्ग को बीसों बार पढा है, सैकडो बार सुना है परन्तु उस पर कभी मनन नही किया, चितन नहीं किया। उसे जीवन मे उतारने का प्रयत्न ही नही किया। भगवन्! शायद इसलिय कि हम मनुष्य हैं, चण्डकौशिक से अधिक ज्ञान है मानव जाति में, परतु उसका उपयोग विपरीत दिशा मे हो रहा है, सहार की ओर। ऐसी दशा मे हमारी गति कैसे सुधरेगी? चण्डकौशिक ने आप की वाणी सुनकर इद्रियों को वश मे कर लिया था, परतु हम तो इद्रियो के दास हो रहे हैं, इन्द्रियो की इच्छा पूर्ति मे अपने गौरव का अनुभव करते हैं, इसका प्रदर्शन करते हैं, हमारा हर कार्य हमारी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना हुआ है, हम अहङ्कार मे लिप्त होकर अपना कर्तव्य भूले हुए हैं। राग-द्वेष और कषाय हमारी रग रग मे व्याप्त है ऐसी दशा मे हमारा आत्मध्यान दिखावा मात्र है और धर्म ध्यान की प्रवृत्तिया आडम्बर। चण्डकौशिक से भी गया बीता जीवन है हमारा।

यात्रा संस्मरण

लेखक—पारसमल कटारिया

परमतारक परमात्मा महावीर देव के परम-पावन २५०० वें निर्वाण कल्याणक पर अनेक रचनात्मक कार्यो की रूप रेखा भारत भूमि एवं विश्व के अनेक खण्डों में हो रहा है, यह शान्ति एवं अहिंसा के अनुयायियो के लिए परम सौभाग्य सूचक है। श्री रणजीतसिंहजी भण्डारी का स्व-प्रयोग भी अत्यन्त उत्साह-वर्धक है। अगर ऐसे ही उदाहरण महावीर के अन्य अनुयायी भी कायम करें तो धर्म की महती प्रभावना हो सकती है।

आज के भौतिक युग में सगाई शादी आदि उल्लासमय समारोह धर्म से पृथक समझे जाते हैं। अगर धर्म से समन्वय किया जाता है तो वह अव्यावहारिक समझा जाता है और कई भोले मानव उसे दिमाग की विकृति समझने लगते है।

श्री रणजीतसिंहजी के सुपुत्र ज्ञानचन्द भंडारी की सगाई का श्रीगणेश स्नात्र पूजा मुनिश्री नवरत्नवियजी का व्याख्यान एवं चतुर्विध संघ के समक्ष ज्ञान एवं गुरु पूजा से सम्पन्न हुआ। श्री ज्ञानचंद भडारी के उस दिन आयंबिल तप था।

शादी समारोह भी अत्यन्त सादगी से सम्पन्न हुआ। आडम्बर का इतनी निडरता से बहिष्कार, बिरले ही देखने को मिलता है। शादी के दिन भी वर को पहचानना मुश्किलसा महसूस होता था। बरात प्रस्थान के दिन भी वर के आयबिल था।

हमारी बस को बरात की बस न कह कर तीर्थयात्री या संघयात्री बस कहना ज्यादा श्रेयस्कर होगा। बस में भगवान् महावीर एवं पार्श्वनाथ जी की जयजयकार गूंजती रहती थी। प्रभू के गीतों का अबाध गति से दौड़ती हुई बस में समा बन्ध जाता था। जहाँ जहाँ गुरु भगवन्तों के दर्शन होते वहां वन्दना का लाभ अवश्य लिया जाता। चाहे बस रुकवानी ही पड़े, पर लाभ से वचित नहीं रह सकते थे। इसी तरह भडारीजी एवं ज्ञानचद के सुबह शाम प्रतिक्रमण का अनिवार्य नियम था, चाहे वहाँ रुकना पड़े। शादी जैन धर्म के नियमानुसार नवीनता एवं रोचकता से सम्पन्न हुई।

दूसरे दिन सभी यात्रियों ने प्रभु दर्शन पूजन आदि किया। वदनावर के तीन मंजिले मंदिर मे स्नात्र पूजा, सत्तरभेदी पूजा वरवधू साथ, साज वाज के सहित अत्यन्त उल्लासमय भाव से सम्पन्न हुई। भंडारी जी नें भक्ति से भाव विभोर होकर अत्यन्त जोर शोर से नृत्य किया।

सांसारिक परिपाटी से निवृत्त होकर तीर्थों की पवित्र भूमि हमें आकर्षित कर रही थी। आगे व्यवस्था का भार मुझे सौंपा गया। मुझे न तो पहले कभी संघ यात्रा का वास्ता पड़ा था और न ही व्यवस्था करने का अनुभव था, परन्तु सब के हार्दिक सहयोग से व्यवस्था अत्यन्त सुचारु रूप से हुई।

यात्रा मे २ महिने के बच्चे से लेकर ७५ साल के वृद्ध भी थे। स्त्री, पुरुष, बच्चे आदि कुल ६७ यात्री थे। यात्रा निःशुल्क थी।

श्री धनरूपमल जी नागोरी, मास्टर हनुमान जी एवं कमला बहन जी ने संगीत का कार्य स्वतः ही

सभाला था , उनके निर्देशन में स्नात्र पूजा, पूजा पढाना, रात्रि को भक्ति भावना आदि आवश्यक होता था।

श्री भुगत चोरडिया ने गर्मी में चलती बस मे जल सेवा बडे मनोयोग से की।

श्री खीमचद पालेचा ने प्राथमिक चिकित्सा कार्य सम्भाला।

श्री कुमारपाल, किशोर भाई एव किशोरभाई चिमनलाल आदि युवानो ने बस में सामान उतारना चढ़ाना व अन्य काय अत्यन्त उत्साह से सम्पन्न किये।

श्री ज्ञानेन्द्र लूनावत एव श्री अमरसिहजी की भोजन व्यवस्था में सनाह व सहयोग अत्यन्त उपयोगी रहा। महिलाओं व बुजुर्गों ने भी सहयोग देने में अपना गौरव समझा, यहा तक कि मोटर ड्राईवर भी पुडी तलने के लिए उत्साह से लीन था।

श्री हीराचद कोचर धार्मिक पुस्तको का वितरण तीथ स्थानों मे उत्साह से कर रहे थे।

ऐसे अत्यन्त स्नेहिल वातावरण मे हम धार के मन्दिरो के दर्शन कर जगल मे मगल धाम के सदृश भोपावर तीथ आये। यहाँ की काच की कारीगरी का अनुपम मन्दिर एव प्रभू शान्तिनाथजी की भव्य खड्गासन 14 फुट की प्रतिमा देख कर स्वय को धन्य मानने लगे। कुछ अजैन यात्री से सीधे जयपुर प्रस्थान करना चाहते थे। परन्तु भोपावर में प्रभु के दशन करते ही कि इतने आल्हादित हुए और निश्चय किया कि चाहे कुछ भी हो कितना ही नुकसान हो तो भी सब यात्रा पूर्ण करके ही जायेंगे। यहाँ प्रतिमा कृष्ण की महारानी रुक्मणी के भाई रुक्मीकुमार ने प्रतिष्ठित करवाई थी।

वहा से मोहन खेडा तीथ के मदिरों के दर्शन किये। यह स्थल सौधर्म तपागच्छीय अभिधान राजेन्द्र (प्राकृत भाषा का महान् कोष) के रचयिता का निर्वाण स्थल है।

भक्तिभाव से विभोर प्राकृतिक सुषमा को निहारते हुए राजगढ के बावन जिनालय एव चार मन्दिरों के दर्शन करत हुए माडवगढ पहुँचे। यह स्थान ऐतिहासिक एव प्राकृति सौंदर्य से परिपूर्ण अत्यन्त ही मनोरम है। मुगल सम्राट अकबर एव जहागीर ने यहा कई बार निवास किया था।

यह पथडशाह झाझणशाह जैसे नर पुगवो की धरती है जिनकी गौरव गाथा कहते हम आज भी नहीं अघाते। सग्राम सोनी की भराई हुई भगवान् शान्तिनाथजी की भूगभ से निकली हुई प्रतिमा यहा प्रतिष्ठित है। यहाँ की जामा मस्जिद जो हिन्दुस्तान की प्रसिद्ध मस्जिदो मे एक है किसी जमाने मे जैन मन्दिर था। इसी तरह शकर मदिर भी अब मस्जिद है। इन दोनों की भव्यता, मजबूती एव स्थापत्य कला देखकर आखें विस्फारित हो जाती हैं।

हमारे चैत्यवंदन में 'मांडवगढ नो राजियों नामें देव सुपास' आता है यह वही माँडवगढ है।

बाजबहादुर एवं रूपमती की प्रणय कथा इतिहास प्रसिद्ध है। नीलकंठ महादेव का प्राकृतिक सौन्दर्य अनायास ही मन को लुभा लेता है।

वहां से इन्दौर में सर सेठ श्री हुकमचंद के विश्व प्रसिद्ध काच के मन्दिर एवं अन्य मन्दिरों के दर्शन किये, यहाँ धर्मशाला में अनेक गणमान्य व्यक्ति इस अद्‌भुत सघ को देखने के कुतूहल से आये थे। श्री भंडारीजी, अशोक एवं ज्ञानचन्द से मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

इन्दौर से देवास गये। यहाँ श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ भगवान् की अशोक वृक्ष, प्रातिहार्य युक्त, परिकरमयं श्वेत पाषाण की सुन्दर प्रतिमा है। मन्दिर भी धवल पाषाण का सुन्दर है। यहाँ जो अखंड दीपक जलता है उसमे से काजल की जगह चन्दन झरता है। यात्रियों ने हाथ लगाकर देखा एव सब आश्चर्यचकित हुए।

आश्चर्य एवं उल्लास की अनुभूति के साथ हम मक्षी मे प्रभु दरबार मे पहुँचे। यहा प्रभु पार्श्वनाथ जी की वालू की प्रतिमा है जो विलेपन होते रहने से अक्षुण्ण है।

मक्षी से अवन्ती पार्श्वनाथ (उज्जैन) के महाप्रभाविक तीर्थ के दर्शन किये। वहा ही सिद्धसेन दिवाकर ने कल्याण मन्दिर स्तोत्र की रचना की थी एवं ११ वां श्लोक बोलते ही शिवलिंग फटकर प्रभु पार्श्व की प्रतिमा प्रकट हुई थी। इसी से प्रभावित होकर महाराजा विक्रमादित्य एवं १८ राजाओ ने जैन धर्म अङ्गीकार किया था।

मंदिर मे पार्श्व प्रभु के ६ भवों की सुन्दर चित्रकारी की हुई है।

उज्जैन में ही खारा कुआ मे सिद्धचक्र का मंदिर जहां श्रीपाल एवं मैना सुन्दरी ने सिद्धचक्र की आराधना कर, इच्छित फल प्राप्त किया था। यहाँ भी कांच के मन्दिर की कला कृति अत्यन्त सुन्दर है।

जो वस्तु जितनी महगी होती है उसकी प्राप्ति मे कठिनाइयों का आना स्वाभाविक है। उज्जैन से नागेश्वर के लिए हमारी बस रजनी के अन्धकार में ऊबड-खावड कच्चे रास्ते मे संभलती हुई कभी मंथर गति से व कभी उछलती कूदती जा रही थी। बीच मे बियावान घोर जगल था। अन्धेरे मे ड्राईवर को रास्ता मिल नहीं रहा था। वह परेशान था और गाडी वापिस लौटाने की जिद कर रहा था परन्तु अशोक व ज्ञान ने दृढ निश्चय कर लिया था कि कुछ भी हो नागेश्वर पार्श्व प्रभु के दर्शन किये बिना जयपुर नही लौटना है। सब के सब लोग उतर गये थे और आश्चर्य है कि वहाँ भी हमे एक आदमी मिल गया। मैं और वह दोनों आगे का रास्ता देखने के लिए झाड झखाडो तथा ऊबड़-खावड़ अन्धेरे रास्तों में चलते हुए पास के कुछ घरों के गॉव मे पहुंचे। वहाँ बैल गाड़ी तो हमे नहीं मिली पर खेत में सोया हुआ आदमी हमारी मदद के लिए हमारे साथ आया। वह बस ड्राईवर को रास्ता समझाने लगा एव उसका उत्साह भी बढाने लगा। उधर यात्री पार्श्व प्रभु का प्रसिद्ध गीत गाने में मस्त थे कि एक अद्‌भुत चमत्कार हुआ। जो ड्राईवर २ घटे से आगे बढने के लिए कतई राजी नही हो रहा था वही ड्राईवर खुशी-खुशी चलने के लिए तैयार था। आगे रास्ता अत्यन्त खराब था तथा काफी जगह पत्थरो एव नदी में चलकर पार करना पड़ी। आखिर हम उन्हेल ग्राम (नागेश्वर) पहुंचे।

नागेश्वर पार्श्वनाथ की १३।। फुट (६ हाथ प्रमाण) नीलवर्ण, खड्गासन, २८०० साल प्राचीन अत्यन्त मनोहर मूर्ति देखकर हम अपनी थकावट व परेशानियां भूल गये और ऐसे तीर्थ के दर्शन कर अहोभाग्य मानने लगे। यह मूर्ति हनुमान के नाम से प्रसिद्ध थी तथा हनुमान जी की तरह चौला होता था। ५–७ साल से ही यह तीर्थ प्रसिद्धि में आरहा है।

भोपावर की तरह ही यहाँ भी पेढी की तरफ से भडारी एव सघ यात्रियो का बहुमान किया गया।

यहाँ प्रथम सघ माल पहनने वाला भडारीजी एव भवरजी दोनों ही उपवास के तपस्वी थे। सयोग से तपस्वी साध्वीजी का भी यहा पदार्पण होगया और ५ मालाओ की बोली बोली गई। सघपति ने प्रत्येक यूनिट एव मेहमान यात्रियो का भी २) २) रुपये से सघ पूजा की एव सघ यात्रियो ने सघपति को हार्दिक बहुमान किया।

सघ की विशेषता धर्म मे अनुप्राणित थी जैसे रात्रि भोजन व अभक्ष्य निषेध एव बासी भोजन वर्जित था।

हरएक तीर्थ पर भगवान की पूजा आरती आदि की बोली बोली जाती थी तथा प्रत्येक यात्री दिल से खर्च करता था। तीर्थ स्थानो मे सामूहिक एव स्वतत्र खर्च प्रत्येक यात्री ने किया। कपिलभाई केशवलाल शाह ने भोजनशाला की स्थाई मिती तीन जगह लिखाकर सघ की शोभा मे अभिवृद्धि की। भोपावर में सामूहिक स्थाई मिती लिखाई गई।

फोटो खिचवाना एव प्रचार फिजूल खर्च मे समझा गया था।

तीर्थ स्थानो मे इतना समय दिया गया था कि ७५ साल के बूढे भी पूजा भक्ति माला गिनना आदि प्रयत्न सहूलियत से कर सकते थे और उन्होने किया भी।

जो चाय नहीं पीते थे उनके एव बच्चो के लिए दूध की व्यवस्था थी। जो प्रभु की पूजा सेवा करने के बाद ही नास्ता पसन्द करते थे उनके लिए नास्ता, दूध चाय आदि की बाद मे व्यवस्था थी।

यात्रा की समाप्ति पर पूज्य पन्यास प्रवर श्री विशालविजयजी म सा की निश्रा मे अठाई महोत्सव सम्पन्न किया

प्रभु महावीर के परम पुनीत २५०० वें निर्वाण कल्याणक पर प्रत्येक बघु यह प्रतिज्ञा करे कि शादी आदि समारोह या दैनिक जीवन मे फिजूल खर्च न करे। जिससे धर्म की प्रभावना व महावीर के शासन मे निखार आता हो वह कार्य करे। धर्म को स्व प्रचार का साधन न मानकर महावीर के अनमोल सिद्धान्तो को हृदयगम करे तो जो अनेक कुरीतियो वा बुराइयो का आवरण हमारे ऊपर छाया है वह अपने आप ही विलीन हो जायेगा जैसे रात्रि का अधकार सूर्य के प्रकाश से नष्ट होता है।

जैन जयति शासनम्।

महावीर का २५०० वां निर्वाणोत्सव एवं हमारा कर्तव्य

श्री एम० पी० जैन
सचिव, कुलपति, वि० वि० जयपुर

हम सब लोगों का सौभाग्य है कि हमने भगवान महावीर के शासन में जन्म लिया, जैन संस्कारों के अनुसार चले और जैन श्रावक के रूप मे आज हम स्वतंत्र भारत की पवित्र धरती पर विचरण करते है। भगवान महावीर का २५०० वाँ निर्वाणोत्सव व्यापक रूप से मनाने का निर्णय वास्तव में सराहनीय है। यदि हम इस अवसर को चूक गये तो जैन इतिहास हमें कभी क्षमा नहीं करेगा। जैसा आपको विदित है, भरत क्षेत्र में इस काल प्रवाह में कोई तीर्थंकर नही होने वाला है। अतः जैन धर्म के प्रचार एव प्रसार का भार आप और हम पर ही है—भगवान ने अपने दिव्य सन्देश में अनगार (मुनि) और सागार (गृहस्थ) दो धर्मो का निरूपण किया है। वर्तमान में जैन मुनियो का अधिकांश समय व शक्ति आत्म-कल्याण के लिये लग रही है। फिर भी कुछ जैन साधु स्व तथा परोपकार में सलग्न हैं किन्तु उनके उपदेशों को व्यापक रूप से फैलाने की अत्यन्त आवश्यकता है। इस दृष्टि से भी इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये हम सबको चुनौती के रूप में स्वीकार करना चाहिये। जैन धर्म के प्रचार व प्रसार का कार्य हमें दो प्रकार से करना है। प्रथम तो हमे धर्म के प्रति स्वयं में ही श्रद्धा एवं विश्वास उत्पन्न करना है। हममें से बहुत से जन्म से तो जैन हैं पर कर्मों में शिथिलता आ रही है। हमारे नवयुवक तथा आने वाली संतति जैन शब्द का अर्थ तक नही जानती। घरों मे णमोकार मंत्र का जाप होता हो, परन्तु हम यह नही जानते कि सच्चे देव, गुरु और शास्त्र कौन से है और उनकी भक्ति और स्तुति का क्या ध्येय है। यही कारण है कि कोई भी विपत्ति आने पर या विशेषतया परीक्षाओं के दिनों में जैनियो के ही बच्चे विभिन्न देवी देवताओ की मनौती मनाते हुए नजर आते है। अतः आवश्यक है कि श्रद्धा के साथ हम हमारे समाज में तथा परिवारों मे विवेक या ज्ञान का प्रतिपादन करें। जैन विद्वानो के सहयोग से धर्म की शिक्षण सस्थाएं स्थापित करें तथा बच्चो को धर्म के अध्ययन के लिये प्रेरित करें। इसके पश्चात हम अपने परिवारो मे चारित्रिक भूमिका की स्थापना करें। अष्टमूलगुण, अणुव्रत और श्रावक के १२ व्रतों का पालन करने की प्रतिज्ञा ले। जिससे हम गर्व से मस्तक उठा सकें कि भगवान के निर्वाण उत्सव पर हमने जयपुर क्षेत्र मे जिनवाणी को कुछ अंशो मे जाना, माना और पालन किया। यहा तो भगवान का कहा हुआ सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र रूपी त्रिरत्न है जिसकी खोज मे हमने अनेक जन्म नष्ट कर दिये।

जिनवाणी के प्रचार व प्रसार का दूसरा चरण होगा जैन धर्म के प्रति जैनेतर लोगो की श्रद्धा एवं विश्वास उत्पन्न करना। हमें उन सब भ्रान्तियों को दूर करना है जो अन्य धर्मावलम्बियों ने स्वार्थपरता के वश होकर इस महान धर्म के प्रति फैला रक्खी हैं। हमें अहिंसात्मक ढंग से ऐसे व्यक्तियो से

लोहा लेना होगा जो अब भी जीव हिंसा में धर्म मानते हैं। येन केन प्रकारेण झूठ, फरेब और चोरी से पेट भरने में जो अपना गौरव समझते हैं, पर-स्त्री को बुरी निगाह से देखना जिनके लिये फैशन है, ब्लैक मार्केट, जमाखोरी, मिलावट आदि द्वारा धन संचय व परिग्रह बढ़ा कर जो समाज और राष्ट्र के साथ गद्दारी करते हैं, गरीबों का खून चूसते हैं। हमारा विश्वास है कि जैन धर्म के नियमों का पालन करने वाली प्रत्येक आत्मा में वह शक्ति है जो अपने संयम और गुणों के बल से सारे समाज और व्यवस्था का कायाकल्प कर देगी। शायद देश का कानून भी यह कार्य उतनी सफलता से नहीं कर सकेगा।

आओ! आज हम प्रतिज्ञा लें कि कुछ अंशों में इन सद्गुणों को अपने स्वयं के जीवन में उतारें और उससे जो शक्ति हमें प्राप्त हो उसके बल पर भगवान महावीर की वाणी का प्रचार करें।

"योजनाओं" का संकलन अत्यन्त सराहनीय है। उनकी पूर्ति के लिये हमें सोचना है। मेरा तुच्छ प्रस्ताव यह है कि २५०० वें निर्वाणोत्सव पर भगवान महावीर तथा जैन धर्म के सम्बन्ध में २५ विषयों पर हम छोटे २ लेखों के रूप में ट्रैक्ट तैयार करें। संक्षिप्त किन्तु पूर्णता लिये हुए ये पुष्प लगभग योजनापत्र के आकार में हों इनका वितरण समस्त शिक्षण संस्थाओं, सरकारी तथा गैर-सरकारी कार्यालयों तथा शिक्षित एवं प्रबुद्ध वर्ग में विस्तृत रूप से हो जिससे अधिकांश लोग जैन धर्म व श्रमण, महावीर के महत्व को जानें, मानें व उनके उपदेशों पर आचरण करें। हमारा ध्येय सफल हो जायगा। अहिंसा धर्म की दुन्दुभी फैल जायगी। हम गुणों के पूजक हैं, नाम व सत्ता के नहीं। यदि जैन न होते हुए भी कोई जैन नियमावली का पालन करे तो वह हमारा साधर्मी है और वात्सल्य का पात्र भी।

उपरोक्त २५ लेखों के आधार पर ही शिक्षण संस्थाओं पर तथा अन्य धार्मिक एवं सामाजिक स्थानों पर हम विचारगोष्ठियों का आयोजन कर सकते हैं। लेखों में जो मैटर मिलेगा उसके आधार पर भाग लेने वाला विस्तार करेगा जिससे कोई विषय को गलत न समझ ले। वक्ता व निबन्ध लेखक अथवा किसी अन्य ढंग से प्रतियोगिता में भाग लेने वाले हमारे इन २५ पुष्पों को सजोये, उन पर चिन्तन करे, मनन करे, समालोचन करे तथा हमारे वर्तमान समय में उनकी उपयोगिता पर टिप्पणी तैयार करे। मुझे विश्वास है कि हमारा यह प्रयास शिक्षित एवं प्रबुद्ध वर्ग में जैनधर्म के प्रति चेतना जाग्रत करने में सफल हो सकेगा। इन लेखों के विषय निम्न प्रकार हो सकते हैं। लेखक, सम्पादक तथा छपाई व्यवस्थापक का चयन समिति करे। हम सबका इस कार्य में सहयोग अनिवार्य होगा।

१—हमारा कर्तव्य
२—भगवान महावीर का धर्म
३—भगवान महावीर का जीवन वृत्त
४—भगवान महावीर का सन्देश—दिव्य देशना
५—भगवान महावीर का अहिंसा दर्शन
६—भगवान महावीर का सत्य दर्शन
७—भगवान महावीर का अस्तेय दर्शन
८—भगवान महावीर का ब्रह्मचर्य दर्शन
९—भगवान महावीर का अपरिग्रह दर्शन

१०–भगवान महावीर का आध्यात्म दर्शन
११–भगवान महावीर का विशाल दृष्टिकोण, अनेकान्तवाद व स्याद्वाद
१२–भगवान महावीर और जातिवाद
१३–भगवान महावीर का वर्तमानकाल मे महत्व
१४–भगवान महावीर और विश्व के अन्य सन्त एव महापुरुष
१५–जैन धर्म–विश्वधर्म
१६–जैन धर्म–इतिहास की दृष्टि में।
१७–जैन धर्म में अहिंसा और विश्वशान्ति
१८–जैन धर्म के पूज्य व गणनीय पुरुष
१९–जैन धर्म की आस्तिकता व ईश्वरवाद, अवतारवाद या उत्तरवाद
२०–जैन धर्म मे विभिन्न धर्मों का समन्वय
२१–जैन धर्म में लोक–व्यवस्था
२२–जैन धर्म में कर्मवाद
२३ जैन धर्म और आधुनिक विज्ञान
२४–जैन साहित्य, कला एवं संस्कृति
२५–जैन धर्म में नारी का स्थान व महत्व।

समझो और उपयोग में लाओ

संकलन कर्ता–श्री जवाहरलाल चोरडिया

१. कर्म का लिखा नही मिटता, इसी से धीर पुरुष विपदा मे पड़ने पर भी कायर नही होते।

२ विपदा मे कही भी हो, पूर्वकृत पुण्य ही आडे आते है, इसलिए धार्मिक कार्य में एक क्षण को भी प्रमाद नही करना।

३. जो तिथि, पर्व, हर्ष, एव शोक आदि को त्याग चुका हो वही सच्चा अतिथि जानना।

४. माँ, बाप, और गुरू की शिक्षा अमृत और सर्वोत्तम रसायन से भी बढ़ कर है जो अभागा नही मानता, वह दिन रात रोया करता है अर्थात संसार में कभी भी सुखी नहीं होता।

५. छः कानों की बात खुल जाती है। चार कानों का भेद छुपा रहता है और दो कानों का भेद ब्रहमा भी नही जान पाते हैं।

६. उत्तम कुल, रूप, कलाओं का अभ्यास, विद्या, लक्ष्मी, सुन्दर नारी, ऐश्वर्य और प्रभुता - ये सब धर्म के प्रभाव से ही प्राप्त होते हैं।

७. समय पर बोला हुआ थोड़ा सा वाक्य, समय पर दिया थोड़ा दान, समय पर होने वाली थोडी सी वर्षा भी करोड़ गुना फल देने वाली होती है।

८. शत्रु की कभी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये, बुद्धिमान लोग छोटी सी व्याधि की तरह नन्हे से शत्रु को भी नष्ट कर देते है।

तप का महात्म्य

लेखक–श्री हितेन्द्रकुमार वी शाह

कर्मों के नष्ट करने का उत्कृष्ट साधन तप है। जिस प्रकार थोडी सी अग्नि रुई के ढेर अथवा लकडियो के समूह को जलाने मे समर्थ है वैसे ही तप कर्म अथवा सामूहिक कर्मों को नष्ट करने मे शक्य है किन्तु तप में सवर भाव की पूरी २ सावधानी जरूरी है। आश्रव मार्ग के द्वार पूर्ण रूप से बन्द करना जरूरी है।

श्री महावीर भगवान् का जीव जब विश्वभूति के भव मे था तब उसने हजार वर्ष तक मास क्षमण के पारणे मास क्षमण का तप किया था। इससे वे अत्यधिक दुर्बल हो गये थे। एक बार सामने से आती गाय ने उन्हे गिरा दिया। इस पर उनके पितृ भाई विशाखानन्दी ने उनकी हंसी उडाई। उसस विश्वभूति सवर भाव से चलायमान हो गये और गर्व मे आ गाय का सींगो से पकड कर आकाश मे उछाल दिया और पुन हाथ मे फेल लिया। अपनी उग्र तपस्या का फल उन्होंने शारीरिक बल चाहा जिसके फलस्वरूप वे १८ वें भव मे प्रथम वासुदेव हुए। निदान करते समय भगवान् का जीव 'मैं दीक्षित हू, सवर भाव मे हू, तपस्वी हू कठिन कर्मों को नष्ट करने हेतु मैं तपस्या कर रहा हूँ' यह सब भूल गया और लक्ष्य से च्युत हो गया। आश्रव पोषक क्रोध और शारीरिक बल का अभिमान करने से सवर भाव चला गया और आश्रव के द्वार खुल गए। वे जीती बाजी हार गए किन्तु सयम के प्रभाव से महाशुक्र नामक सातवें स्वर्ग मे देव हुए और यहा से च्यवन कर निदान के अनुसार मनुष्य लोक मे त्रिपृष्ठ नाम के प्रथम वासुदेव हुए।

ग्यारहवे तीर्थंकर श्री श्रेयांसनाथ भगवान् के शासन काल मे वासुदेव के भव मे प्राप्त सत्ता एवं सम्पत्ति के अभिमान से मदोन्मत्त हो उन्होने क्रोध से शय्यापालक के कानो में गरमगर्म शीसा डलवा दिया जिससे भयकर कर्मों का बध कर वे सातवें नरक मे पहुँचे और वीर प्रभु के भव मे शय्यापालक के जीव ने उनके कानो मे कीलें ठोके। निकाचित कर्म शीघ्र नष्ट नहीं होते है। यह बात तप का अभ्यास करने वालो को ध्यान मे रखना जरूरी है। उन्होने २५ वें भव मे एक लाख वर्ष का उत्तम चारित्र पालन किया। मास क्षमण से कम तप नही किया। ११८०६४५ मास क्षमण तप किये। तप और सयम लक्ष्मी के वशीकरण हैं।

चरम केवली श्री जबुस्वामी के जीव ने शिवकुमार के भव मे गृहस्थावस्था मे १२ वर्ष तक छठ के पारणे आयम्बिल किये थे, उन्होंने घर मे ही साधु का जीवन व्यतीत किया था। वह तपस्या फलीभूत हुई। श्री ऋषभदेव भगवान् की पुत्री सुन्दरी ने ६० हजार वर्ष तक निरन्तर आयम्बिलतप करके भरत महाराज का मोह दूर किया और दृढ प्रहार करके छह मास की तपस्या में केवल ज्ञान प्राप्त किया। अशकटापिता नामक निग्रथ मुनि ने उत्तराध्ययन के ४ थे अध्याय को पढ १२ वर्ष तक लगातार आयम्बिल किए और अन्त में केवल लक्ष्मी को प्राप्त किया। धनकाकन्दी ने दीक्षा के दिन से ही छठ के पारणे आयम्बिल किया। ६ मास में धर्म तप करते हुए मर सर्वार्थ सिद्धि विमान में गए। श्री जगच्चन्द्र सूरिजी ने आजीवन आयम्बिल किये जिन्हें मेवाड के महाराज ने तप का विरुद दिया और जिससे तपागच्छ का प्रवर्तन हुवा। सूरिजी आयम्बिल मे वैसाख जेठ की कडकडाती धूप मे नदी को

गर्म वालु मे सूर्य के सामने दृष्टि रख काउस्सग्ग से रहते थे। ऐसे थे अपने तपागच्छ के प्रवर्तक आचार्य भगवन्त।
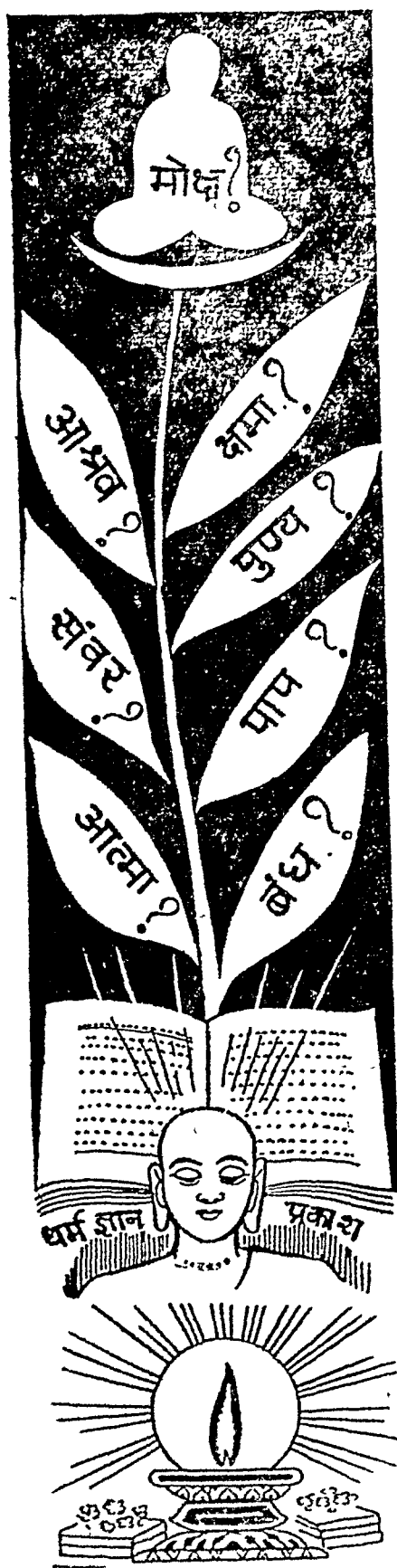
सती दमयन्ती ने अपने पूर्व भव वीरमती के भव में ५०४ आयम्बिल तीर्थकर तप करते हुए हरेक भगवान् के ललाट पर हीरे के तिलक लगाए थे जिसके प्रभाव से दमयन्ती के भव में हाथ घिसने से कपाल मे अपूर्व तेज प्रकट हुआ जिसके प्रकाश मे घने जंगल मे वडी भारी सेना रात्रि के समय भी दिखाई दे सकती थी।

वीर प्रभु का पिष्पक नाम का शिष्य दो वर्ष छठ के पारणे आयम्बिल कर देवलोक गया। दूसरा कुरुदत्त नामक शिष्य अठम पारणे आयम्बिल करके छह महीने मे देवलोक गया।

श्री सिद्धसेन दिवाकर बारह वर्ष आयम्बिल करते थे किन्तु उन्हे विक्रम राजा को प्रतिबोध करने जाना पडा। अत. संघ ने नवमे वर्ष मे आचार्य प्रभु को पारणा कराया।

श्री चन्द्र केवली ने जिनकी तपस्या का महात्म्य ८०० चौवीसी तक अमर रहेगा, १०० ओली वर्धमान आयम्बिल की थी। "श्रेणिक महाराज की सांसारिक रानी साध्वीजी महासेन कृष्णाने १०० वी ओली सम्पूर्ण की थी जिसका वर्णन अध्ययन वर्ग ८ में है। श्रेणिक महाराज की दूसरी रानी नन्दा जो अजयकुमार की मातुश्री थी, आदि का वर्णन अध्ययन १३ में है, ये सब सतिया तपस्विनी थीं।

श्रेणिक महाराज क्षायिक सम्यक्त्वि मे शिरोमणि थे, जो वर्तमान मे नरक मे हैं किन्तु वे भविष्यत् चौबीसी में उत्सर्पिणी काल मे प्रथम तीर्थकर श्री पद्मनाभ होगे।

चक्रवर्ती के पास १२००० प्रभावशाली यक्ष एवं १४ रत्न आदि का अतुल वैभव होता है फिर भी उन्हे छह खण्ड विजय करने से पूर्व अठ्ठम तप करना पड़ता है।

अरिहत वीर प्रभु के ७०० केवली हुए। लब्धि निधान गुरु गौतम के ५०००० केवली हुए। अरिहन्त मुख्य गिने जाते हैं किंतु गुरु (गंगाधर आदि) का स्थान भी उत्तम है। २४ तीर्थकरो का काल दो पूर्व का भी पूरा नही किंतु उनके शासन को गणधर आदि गुरु भगवंतो ने एक कोड़ा कोड़ी काल तक चलाया है। गुरु गौतम का तप भी याद करने योग्य है। तपस्वियो के गुण याद करने से उनका कुछ अंश हमारे मे आजाता है।

हमारे ग्राम में पूज्य साध्वीजी तीर्थश्रीजी ने १०० ओली पूरी की थी इसके वाद कितने ही तपस्वियो ने १०० ओली पूर्ण करली है और कितनो की पूर्ण होने को है।

तीर्थकरो के पवित्र और मंगल नाम के जप कीर्तन की महिमा अपार है, उसमे करोडो तप का फल मिलता है। प्रभु का नाम भव जलतरण शिवसुख मिलन है। तप जप मे कल्याण होता है।

भगवान महावीर का २५०० वां निर्वाण दिवस

लेखक—श्री सुरेशकुमार मेहता, जयपुर

सभ्यता और संस्कृति के क्षेत्र में उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुंचा आज का मानव महावीर, गौतम, नानक, ईसा व मुहम्मद के उपदेशों को मानने हेतु तैयार नहीं, परन्तु उन्हीं के उपदेशों, उन्हीं के आदर्शों की आड़ में उन्हीं के आदर्शों की हत्या करके अपने हाथों में कालिख लगा रहा है।
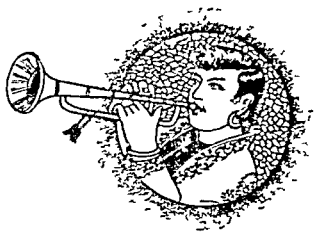
आज सारा संसार विश्व विनाश की प्रलयकारी आंधी और तूफान के दौर से गुजर रहा है, दानवता मानवता का विरोध कर रही है और मानवता सिसक रही है। ऐसे संकट के समय हमें अहिंसा का, महावीर के सिद्धान्तों का सहारा लेना होगा तभी शायद हम इस संकट को टाल सकते हैं।

हर प्रश्न उत्तर चाहता है और प्रत्येक के उत्तर हेतु हमें अतीत की ओर लौटना होगा। जब जैनों में 363 प्रकार के मत प्रचलित थे सारे वातावरण में कट्टरता, धार्मिक मतभेद, साम्प्रदायिकता, ग्रन्थों, व मन्दिरों का विनाश आदि निन्दनीय कार्य करते मानव अपने को धार्मिक ठहराता था। आज स्थिति उससे खराब तो नहीं, ठीक अवश्य है। उस समय भगवान महावीर के अपने उपदेशों ने प्रकाश बतलाया और उससे शांति का वातावरण फैला। आज भी हमें उनके उपदेशों, आदर्शों का सहारा लेना होगा, उनका मनन और चिंतन करना होगा।

महावीर किसी जाति विशेष के नहीं किसी सम्प्रदाय के नहीं किसी विशिष्ट राष्ट्र के नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानव या उससे भी अधिक प्राणी मात्र के थे। फिर जैनों के विचार में इतना संकुचितपन क्यों? आज जैनों में अनेक गच्छों का जन्म हो गया है लेकिन महावीर ऐसा नहीं चाहते थे, महावीर को करना ही होता तो वे मानव जाति को कई खण्डों में विभाजित कर देते।

मानव मानव के खून का प्यासा हो रहा है। संकीर्णता का पर्दा इस तरह छाया हुआ है कि हम सीमा से बाहर नहीं निकल सकते। भगवान महावीर के उपदेशों को ताक में रखकर हम अपने स्वार्थ की पूर्ति नहीं कर सकते। इसलिए उनके उपदेशों को समझ कर प्राणी मात्र को गले लगाकर समाज को फिर से संवार कर, मानवता धारण कर, मतभेद दूर करने होंगे तभी हम अपने लक्ष्य तक पहुंचेंगे।

आज २५०० वे वर्ष मे उनकी याद में इतना कुछ हो रहा है । स्मारक, फिल्मे, लेख सभी तैयार किए जा रहे हैं परन्तु इन सबकी आड में हमने दर्शन को भुला दिया तभी तो आज सहनशीलता व त्याग से बने जैन समाज का पतन हो रहा है, समाज कई खण्डों में विभाजित है । हमारी कथनी और करनी में अन्तर है । जब तक हम संकीर्णता भरे प्रश्नों का हल नहीं निकाल लेते जब तक हम २५०० वां महावीर निर्वाण दिवस सही रूप में नहीं मना पायेगे ।

जैन का अर्थ है जिसने मन को जीत लिया हो । मै इसलिये जैन हू कि मेरे माता पिता, पूर्वज सभी जैन थे यह कहना गलत है । जैन कोई जाति, दर्शन नहीं है । भगवान महावीर के अनुसार दूसरों पर शासन करने के लिए खुद पर शासन करना जरूरी है । स्वयं को वश मे करना जरूरी है । युद्ध से हम अनेक को भी जीत लें तो भी व्यर्थ है ।

अगर वास्तव में हमें महावीर निर्वाण दिवस मनाना है तो आज सम्प्रदाय को छोड़ एक होकर, शोषण समाप्त कर, कथनी और करनी के भेद को दूर करके मनाना होगा । यदि हम निहित स्वार्थों को तिलाजलि दे आगे बढने के लिए एक हो जायें तो यही भगवान महावीर को सच्ची श्रद्धांजलि होगी ।

~~~~~~

समाचार

पन्यास प्रवर श्री विशालविजयजी म. सा. के निश्रा में श्री सरदारमलजी छाजेड़ की धर्मपत्नी श्रीमती सूरजकंवर छाजेड़ एवं स्वर्गीय श्री फतेहचन्द जी गांधी आगरे वालों की धर्मपत्नी श्रीमती भाग्यसुन्दरी गाँधी ने महामृत्युजय तप, मासक्षमण निर्विघ्न रूप से सम्पन्न किया । इस अवसर पर चैत्य परिपाटी शासन के गीत एवं अन्य कार्यक्रम समारोह पूर्वक सम्पन्न हुए ।

श्री ज्ञानेन्द्र लुणावत की धर्मपत्नी श्रीमती पुष्पादेवी लुणावत ने अठाई की तपस्या शान्ति से सम्पन्न की । इस अवसर पर सत्रह-भेदी पूजा आदि कार्यक्रम बड़े उल्लास से सम्पन्न हुए ।

~~~~~~

वीर स्तुति

श्री धनरूपमल नागोरी
एम. ए, बी एड. 'साहित्यरत्न'

जयतु-जयतु महावीर ।
कोटि-कोटि सुर-जन अभिवंदित
दिक्-दिक् व्याप्त, कीर्ति अभिनंदित
क्षमा शील प्रभु वीर ॥

सिद्धारथ कुल-चन्द अकलंकित,
त्रिशलानंदन अर्चित पूजित
मेरु-सम प्रभु धीर ॥

समता सागर दया तपोनिधि
ज्ञान उजागर त्रिभुवन गुण-निधि
सागर-सम-गंभीर ॥

चरमतीर्थ-पति, शासन-पति विभु,
नत-मस्तक धन-पद-पंकज विभु
काटो कर्म-जंजीर ॥

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

का

वार्षिक कार्य–विवरण

(सम्वत् 2031 दूसरा भद्रपद्र ग्रमावस तक)

परम पूज्य गुरुवर्य, साध्वीजी महाराज साहबान, अतिथिवृन्द, साधर्मी बन्धुओं,

सर्वप्रथम अनन्त उपकारी पांचवें तीर्थंकर श्री सुमतिनाथ भगवान तथा अधिष्ठायक देव श्री मणिभद्रजी को स्मरण करते हुए, आज इस श्रीसघ के वार्षिक उत्सव पर मैं आप सभी का हार्दिक अभिनन्दन एवं स्वागत करता हूँ। इस विशिष्ट वर्ष में जब कि हम भगवान महावीर का 25 सौवां निर्वाणोत्सव मना रहे है, यह हमारा परम सौभाग्य है कि मेवाड़ रत्न, राजस्थान दिवाकर, पन्यासप्रवर श्री विशाल विजयजी म. सा. गणिवर्य (विराट्), मुनिश्री राजशेखरजी म. सा. एवं मुनिश्री भद्रबाहुविजयजी म. सा. चातुर्मास प्रवास हेतु हमारे बीच विराजमान है। आप श्री की निश्रा में समस्त श्रीसंघ धर्माराधना में संलग्न है एवं त्याग, तपस्या, प्रभु भक्ति, दैनिक धार्मिक क्रियाओ आदि के द्वारा परम लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर हैं। हमारे लिए यह भी प्रसन्नता का विषय है कि साध्वजी श्री कल्पशिलाश्रीजी व प्रियदर्शनाश्रीजी, एवं साध्वीजी श्री (1) श्री सुलोचनाश्रीजी (2) श्रीशीलभद्रा श्रीजी (3) श्री श्रेयगुणाश्रीजी चातुर्मास प्रवास हेतु जयपुर में विराजमान हैं जिनके सतत् प्रयत्नों से श्राविकाओं में विशेष चेतना एवं जागृति है।

इससे पूर्व कि मैं आप के समक्ष इस संस्था की विभिन्न गतिविधियों के बारे में जानकारी प्रस्तुत करूं, गत वर्ष की कुछ उल्लेखनीय घटनाओं एवं उपलब्धियों के बारे में संक्षेप में निवेदन करना चाहूंगा।

साध्वीश्री दमयंतीश्रीजी म. सा. का चातुर्मास :

गत वर्ष संघ के सौभाग्य से यहाँ सरलहृदया विदुषी प्रवर्तिनी साध्वी श्री दमयन्तीश्रीजी ठाणा 6 का चातुर्मास सानन्द एवं हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ। आप की निश्रा में पर्वाधिराज पर्यूषण महापर्व की आराधना बड़ी धूमधाम व शालीनता से सम्पन्न हुई। गत वर्ष लगभग 30 मासक्षमण, अनेक अट्ठाइयाँ एवं सैकड़ों विभिन्न प्रकार की तपस्यायें और विभिन्न धार्मिक आयोजन हुए। जन्म वांचन के दिन मासक्षमण के तपस्वियों का श्रीसंघ की तरफ से भु. संघमन्त्री श्री हीराचन्दजी वैद के करकमलों द्वारा चाँदी की रकेबी व कटोरी भेंट कर बहुमान किया गया। पर्वाधिराज के आठों ही दिन प्रभु भक्ति एवं अंग रचना का विशिष्ट आयोजन रहा और दर्शनार्थियों की अपार भीड ने दर्शन-वन्दन का लाभ लेकर अपने आप को कृत्य-कृत्य किया।

जन्म के दिन की प्रभावना का लाभ श्री हीराभाई एम शाह ने एवं पोथाजी के जुलूस व रात्रि जागरण कराकर मोदक की प्रभावना का लाभ श्री सरदारमलजी लूनावत ने लिया।

भादवा शुक्ला 11 को मुगल सम्राट अकबर प्रतिबोधक जगतगुरु श्री विजयहीर सूरीश्वरजी म सा की स्वर्गारोहण तिथि पर पूजा का विशिष्ठ आयोजन किया गया। जिसमें विशिष्ठ वक्ताओं के भाषण हुए तथा उनके जीवन पर प्रकाश डाला गया।

संघ यात्रा प्रवर्तिनी साध्वीश्री दमयन्ती श्रीजी की सद्प्रेरणा से आसोज वदी 13 दिनांक 14-9-74 को श्री शत्रुंजय व मालवा देश के तीर्थों की यात्रा हेतु बस द्वारा यात्री सघ ने प्रस्थान किया एव पन्द्रह दिन तक विभिन्न तीर्थों की यात्रा एव आचार्य, मुनि भगवन्तों के दर्शनों का लाभ लेते हुए सकुशल जयपुर लौटा। यात्रा के दौरान बम्बई पहुचने पर पन्यास प्रर की सेवा मे उपस्थित होकर जयपुर चातुर्मास की विनती की गई।

ओलीजी आसोज मास में ओलीजी की आराधना सानन्द सम्पन्न हुई।

जैन धार्मिक पाठशाला का समारोह कार्तिक सुदी 5 (ज्ञान पचमी) के दिन श्री आत्मानन्द जैन धार्मिक पाठशाला का समारोह श्री मिलापचन्दजी लोढा अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश,की अध्यक्षता में मनाया गया। इस अवसर पर कतिपय बालक-बालिकाओं के मासिक सहायता एव वजीफे स्वीकार किए गए एव छात्र-छात्राओं को पारितोषिक वितरित किए गए।

श्री ऋषिमण्डल पूजन जयपुर में प्रथम बार बडे रूप में श्री ऋषिमण्डल वृहत्पूजन का आयोजन श्री हीराभाई एम शाह की ओर से किया गया जिसका त्रिदिवसीय कार्यक्रम सोल्लास सम्पन्न हुआ। सम्पूर्ण विधि विधान पण्डित श्री भगवान दासजी की निश्रा में श्री धनरूपमलजी नागोरी ने कराया। माडलाजी माडने में श्री ज्ञानचन्द भण्डारी का पूरा सहयोग रहा।

प्रस्थान मिगसर मास में साध्वीजी म सा ने कलकत्ता के लिए प्रस्थान किया। आगरा तक मार्ग मे श्रावकों द्वारा भक्ति का लाभ लिया गया।

मुनि वृन्दों का आगमन गत चातुर्मास काल के समापन से लेकर इस चातुर्मास काल के प्रारम्भ के बीच श्रीसघ को अनेकों आचार्य भगवन्तों एव मुनिवृन्दों के दर्शन एव भक्ति का लाभ प्राप्त हुआ है जिनमे उल्लेखनीय हैं मुनिराज श्री जयन्त विजयजी ठाणा 2, साध्वीजी श्री पुण्योदय श्रीजी ठाणा 5, आचाय भगवन्त श्री समुद्रसूरीजी के शिष्य जितेन्द्र विजयजी एव आचाय भगवन्त श्री कैलाशसागरजी की आज्ञानुवर्तिनी आर्या श्री चन्द्रप्रभा श्रीजी ठाणा 4 तथा साध्वी श्री सुलोचना श्रीजी आदि ठाणा 3 का आगमन हुआ।

आचार्य भगवन्त श्री विजय समुद्रसूरीजी के 16 शिष्य परिवार सहित आगमन एव मुनिश्री नयरत्न विजयजी एव जयरत्नजी का आगमन विशेष उल्लेखनीय है जिनके बारे में विस्तार से आगे प्रकाश डालू गा।

छ रीपालता (पद यात्री) सघ का आगमन कलकत्ता से पालीताना के छ रीपालते पद यात्री चतुर्विध सघ का जयपुर आगमन एक अविस्मरणीय घटना है। वैसे तो इस सघ यात्रा का आयोजन ही अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है लेकिन जयपुर के लिए यह और भी आनन्द और सौभाग्य का विषय था। यह निश्चय किया गया कि सघ के अनुरूप ही उनका स्वागत सत्कार किया जाय और इसके सफल आयोजन के लिए विभिन्न उपसमितियों का निर्माण किया गया और सभी के अथक परिश्रम, कुशल सचालन एव निष्ठा एव लगन के साथ किए गए कार्य से मनोनुकल काय सम्पन्न हुआ।

चतुर्विद संघ के जयपुर आगमन पर राज्य के वित्तमन्त्री श्री चन्दनमलजी वैद एवं श्री घसं के अध्यक्ष श्री हीराभाई एम शाह ने श्रीसंघ की अगवानी की एवं हाथी घोड़े, बैंडबाजे और हजारों नर-नारियों के जुलूस के साथ चतुर्विद सघ का आत्मानन्द सभा-भवन में आगमन हुआ। सघ के त्रिदिवसीय प्रवास काल में साधर्मी भक्ति का लाभ मुख्य रूप से श्री हीराभाई एम शाह, श्री पारसदास जी ढड्ढा, श्री राजमलजी सुराना, श्री बच्चूभाई, शांतिभाई श्री राजरूपजी टांक, श्री पूनमचन्दजी हरिश्चन्द्रजी बडेर, श्री बुधसिंहजी हीराचन्दजी वैद एवं श्री तपागच्छ संघ ने लिया। इस कार्य में श्री कन्हैयालालजी जैन का सतत् सहयोग भी सराहनीय रहा। श्री पारसदासजी ढड्ढा ने अपने घर पर आचार्य भगवंत के पगलियाजी करा कर एवं एक-एक रुपये की समस्त संघ यात्रियों को भेंट कर संघ पूजा का अपूर्व गुरु भक्ति व साधर्मिक भक्ति का परिचय दिया। प्रतिदिन सायंकाल श्री मन्दिरजी में भक्ति का रोचक कार्यक्रम एवं प्रातःकाल में आचार्य भगवन्त श्री विक्रमसूरीजी के मुखारविन्द से सामूहिक भक्तामर का पाठ आज भी हृदय में स्मृति बनाए हुए हैं।

श्री सुबोध कालेज के प्रांगण में चतुर्विध संघ के स्वागत एवं अभिनन्दन का आयोजन किया गया जिसमें राज्य के वित्तमन्त्री श्री चन्दनमलजी वैद, श्री मोहनराजजी विधायक, सभी जैन सम्प्रदायों के विशिष्ठ एवं गणमान्य महानुभाव एवं हजारों की तादाद में भाई-बहिन उपस्थित थे। कार्यक्रम का आरम्भ श्री नागौरी, श्री लक्ष्मीचन्द भंसाली एवं श्रीमती कनक हाडा के गीतों से हुआ। श्री हीराभाई एम शाह अध्यक्ष ने अभिनन्दन पत्र मढ़ा एवं मालार्पण कर संघपतियों का बहुमान किया। इस अवसर पर विभिन्न वक्ताओं के भाषण हुए एवं आचार्य भगवन्त श्री नवीनसूरीजो, श्री विक्रमसूरीजी श्री जयन्तसूरीजी एवं श्री निपुणप्रभसूरिजी के दर्शन एवं आचार्य श्री विक्रमसुरिजी एवं मुनी श्री राजयश विजयजी के प्रवचन से उपस्थित जनसमुदाय मन्त्रमुग्ध हो गया। आचार्य भगवन्तों को श्री संघ की ओर से कामली भेंट की गई एवं संघपतियों को मालार्पण कर भगवान महावीर स्वामी का स्टील का फ्रेम में जड़ा चित्र एवं प्रत्येक संघ यात्रियों को सुन्दर फ्रेम में जड़ा भगवान महावीर स्वामी का चित्र भेंट किया गया। उपाध्यक्ष श्री कपिल भाई की ओर से संघपतियों एवं प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को भगवान पार्श्वनाथ स्वामी की चन्दन की प्रतिमा जी भेंट की गई एवं यात्री सघ की ओर से इस संस्था को 96 धातु की प्रतिमाएं भेंट की गई। जयपुर श्रीसंघ का सैकड़ों वर्षों में यह प्रथम अवसर था जबकि उसे छःरी पालते पैदल श्री चतुर्विद संघ की भक्ति का अपूर्व लाभ प्राप्त हुआ।

दुर्घटना :

कभी-कभी घटनायें इस प्रकार और इस तेजी से घटित होती है कि जिनकी सहज ही कल्पना भी नहीं की जा सकती। छःरी पालते संघ के हार्दिक अभिनन्दन की खुशियों का प्रभाव मन्द भी नहीं होने पाया था कि इधर पन्यास श्री स्थूलभद्रजी म. सा. को अपने एक शिष्य मुनि की अस्वस्थता के कारण यात्रा सघ का साथ छोड़कर वापस जयपुर लौटना पड़ा, उधर साध्वी श्री चन्द्रप्रभजी ने ठाणा 4 के साथ अजमेर की ओर विहार किया। मार्ग में जयपुर से 23 मील दूर महला ग्राम से अजमेर की ओर प्रातः कालीन विहार के समय यातायात निगम की बस से दुर्घटना घटित हुई एवं आर्या श्री चन्द्रप्रभाश्रीजी एवं श्री चारुशीलाश्रीजी का घटना स्थल पर ही देवलोक वास हो गया और साध्वी श्री कल्पशीलाश्रीजी एवं प्रियदर्शनाश्रीजी घायल हो गई। साथ गये हुये कर्मचारी श्री लल्लूलाल का भी घटना स्थल पर ही देहान्त हो गया। दुर्घटना का समाचार मिलते ही समस्त जयपुर संघ के गणमान्य

राजस्थान की ओर विहार करने का अपना निर्णय सुना दिया और कपडवज पहुँचने पर पक्का निर्णय लेने हेतु कहा। अत पुन श्रीसघ के अध्यक्ष श्री हीराभाई एम शाह, श्री बाबूलालजी, श्री कपिलभाई, श्री सुशीलकुमारजी छजलानी एव श्री इन्दरचन्दजो चोरडिया कपडवज गये जहा आपश्री ने जयपुर चातुर्मास करने की स्वीकृति प्रदान की और प्रतिनिधियों ने जय बुलवाई। इस समाचार के प्राप्त होते ही जयपुर श्रीसघ में प्रसन्नता की लहर दौड गई।

आप श्री अत्यन्त उग्र विहार करते हुए, मार्ग में कठोर कष्टों को झेल कर, उदयपुर में दो बालिकाओं को भगवती दीक्षा देते हुए जयपुर पधारे। केकडी व मालपुरा से जयपुर तक के माग के हर मुकाम पर सघ के सदस्यगण निरतर आपश्री की सेवा में उपस्थित होते रहे। नगर प्रवेश से पूर्व जयपुर आगमन पर श्री बाबूलालजी तरसेमकुमारजी ने दो दिन तक अपने निवास स्थान पर आपके पगलिए करा कर गुरु भक्ति का परिचय दिया।

22 जून, 74 को आपश्री एव दोनों शिष्य मुनि श्री राजशेखर विजयजी एव मुनि श्री भद्रबाहुविजयजी म के नगर प्रवेश का भव्य आयोजन किया गया। मुनिगणो को हाथी, घोडे, बैंडबाजे, भजन मण्डली और हजारो नर नारियों के भव्य जुलूस के साथ रामलीला मैदान से राजमार्गों पर होते हुए, आत्मानन्द सभा भवन तक पधरावणी की गई। मार्ग को तोरणद्वारो, वन्दनवारो आदि से सजाया गया था। मार्ग मे स्थान स्थान पर गहुलिया कर आपका अभिनन्दन एव गुरु भक्ति की गई।

आ० म० श्री रामसूरिजी डेलावाले की आज्ञानुवर्तिनी साध्वी म० श्री सुलोचनाश्रीजी, शीलभद्राश्रीजी एव श्रेयगुणाश्रीजी तथा आचार्य म० श्री कैलाशसागरसूरीजी की आज्ञानुवर्तिनी साध्वी म० श्री प्रियदर्शनाश्रीजी तथा कल्पशीलाश्रीजी भी जुलूस के साथ थी, जो चातुर्मास काल हेतु यहा पर विराजमान हैं।

पन्यास प्रवर के शिष्य समुदाय सहित श्री आत्मानन्द सभा भवन पहुँचने पर श्रीसघ के मन्त्री श्री जवाहरलाल चोरडिया ने हार्दिक अभिनन्दन किया। इस अवसर पर आयोजित सभा में उपस्थित विशाल समुदाय को सम्बोधित करते हुए आप श्री ने कहा कि बिना सदाचार, समझदारी और गम्भीरता के जीवन अपूर्ण है। यदि सच्चे सुख की प्राप्ति करना है तो जीवन मे सयम और सदाचार होना परमावश्यक है।

इस अवसर पर भूतपूर्व सघ मन्त्रियो में श्री हीराचन्दजी वैद एव श्री मोतीलाल भडकतिया के भी भाव भक्तिपूर्ण भाषण हुए।

आपके जयपुर आगमन से श्रीसघ में अत्यन्त प्रसन्नता है और यथोचित धार्मिक आराधनाए, प्रवचन, अट्ठम तप आदि के आयोजन हुए हैं और श्रीसघ आपश्री ने जो कृपा की है उसके लिए अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

सिंहावलोकन

विगत दस माह की विभिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं का मैंने आपकी सेवा मे सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है और मुझे यह सूचित करते हुए भी अत्यन्त प्रसन्नता है कि इतने सब विशिष्ठ व आर्थिक दृष्टि से व्यय साध्य कार्यक्रमों के सफल आयोजन आप सभी के हार्दिक एव उदार सहयोग से परिपूर्ण हो सके हैं एव इतना सब कुछ व्यय भार होने पर भी सस्था की स्थाई–अस्थाई निधि पर किसी भी प्रकार का भार आए बिना सभी कार्य भली प्रकार पूर्ण हुए हैं।

संस्था की स्थाई गतिविधियां :

अब मैं आपकी सेवा में संस्था की स्थाई गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत करूंगा जो निम्न प्रकार है—

श्री मन्दिर जी :

श्री सुमतिनाथ जैन श्वेताम्बर तपागच्छ मन्दिर का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। सेवा-पूजा, भक्ति-भावना आदि के विशिष्ठ और दैनिक आयोजन सुचारु रूप से चल रहे हैं। यहां के चमत्कारी अधिष्ठायक देव की आराधना और दर्शनार्थियों की भीड़ कल्पनातीत हैं। मन्दिरजी के ऊपरी भाग के खम्भों में संगमरमर का कार्य पूर्ण हो गया है। रंग रोगन और पेंटिंग का कार्य भी लगभग पूर्ण हो चुका है। इस गवाक्ष में भगवान महावीर के 27 भवों की सुन्दर चित्रकारी कराने की योजना विचाराधीन है जो शासन देव की कृपा एवं आप सभी के उदार सहयोग से परिपूर्ण होगी ऐसी आशा है।

आयम्बिल शाला :

इस संघ का श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला एक प्रमुख अङ्ग है जिसमें वर्ष भर में लगभग दस हजार आयम्बिल होते हैं। इस खाते में प्रति वर्ष काफी घाटा रहता है और इस वर्ष तो खाद्य-पदार्थों की अत्यधिक महंगाई व मिलने में कठिनाई से भी काफी खर्चा और परेशानी बढ़ गई है। इस कार्य के भली प्रकार से संचालन हेतु आप सभी बन्धुओं का हार्दिक एवं उदार सहयोग अवश्यम्भावी है। महासमिति को पूर्ण विश्वास है कि इस महान् मांगलिक आराधना के निमित्त कार्य में आप सभी का सम्पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा जिससे घाटे की पूर्ति भी शीघ्र हो सकेगी।

उपाश्रय :

उपाश्रय की व्यवस्था सुचारु रूप से चल रही है। यहां पर एक अतिरिक्त शौचालय का अभाव काफी समय से अनुभव किया जा रहा था जिसकी पूर्ति अभी हाल में ही कर दी गई है।

इतने विशाल भवन के होते हुए भी शासन प्रेमियों की बढ़ती हुई संख्या के कारण स्थान की कमी को काफी अर्से से अनुभव किया जा रहा है। अनेक गतिविधियां स्थानाभाव के कारण कुशलता से प्रगति नहीं कर पा रही हैं एवं जब जब भी विशिष्ठ आयोजनों का अवसर आता है दूसरों पर आश्रित रहना पड़ता है। इस कमी को दूर करने के लिए महासमिति ने काफी प्रयास किया है और निरन्तर प्रयत्नशील हैं पर वर्तमान की कठिन परिस्थितियों में और आबादी की सघनता के कारण नवीन भवन लेने में सफलता प्राप्त नही हो रही हैं। फिर भी महासमिति सफलता प्राप्ति तक प्रयत्नशील रहेगी।

श्री आत्मानन्द जैन धार्मिक पाठशाला :

श्री आत्मानन्द जैन धार्मिक पाठशाला का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। इसका पूरा भार श्री भंवरलाल शांतिलाल शाह (मंगलचन्द ग्रुप) की ओर से वहन किया जा रहा है।

पुस्तकालय :

पुस्तकालय व ग्रन्थ भण्डार का कार्य वर्ष भर ठीक तरह से चलता रहा लेकिन अभी हाल ही में कर्मचारी की कमी के कारण कुछ बाधा उपस्थित हुई है जिसके लिए महासमिति को खेद है। इसको शीघ्र ही सुव्यवस्थित एवं सुविधाजनक बनाने हेतु व्यवस्था की जा रही है।

हाल ही मे श्री भीमराज जी मुणोत के सद् प्रयास से पुस्तकालय को एक हजार रु० की पुस्तकें एव धार्मिक पाठशाला को लगभग छ सो रुपये के वाद्य यन्त्र मगवाने की स्वीकृति श्री राज वेलफेयर ट्रस्ट ने प्रदान की है। कई छात्र व छात्राओं के पढ़ने हेतु पुस्तको की तथा फीस की व्यवस्था भी आपके सहयोग से श्री राज वेलफेयर ट्रस्ट द्वारा दी गई है । महासमिति राज वेलफेयर ट्रस्ट व श्री मुणोतजी की आभारी है और आशा करती है कि भविष्य मे भी इसी प्रकार सक्रिय सहयोग प्राप्त होता रहेगा ।

उद्योग शाला

पू० साध्वी श्री निर्मलाश्रीजी ने साधर्मी उत्कर्ष हेतु एक उद्योगशाला चलाने की प्रेरणा अपने चातुर्मास काल मे की थी, जिसके परिणामस्वरूप एक बुनाई की मशीन गुप्त नाम से तथा दो सिलाई की मशीनें शाह किस्तूरमलजी की ओर से प्राप्त हुई थी । सक्षम कार्यकर्ताओं के अभाव मे यह उद्योगशाला कुछ समय तक चलकर बन्द हो गई ।

इस उद्योगशाला के कार्य को पुनर्जीवित करने का निश्चय किया गया और श्री धाम्पमलजी नागौरी ने इस भार को उठाने की स्वीकृति प्रदान की। श्रीसघ के अध्यक्ष श्री हीराभाई एम शाह ने तीन सिलाई मशीने भेंट की हैं । श्री राज वेलफेयर ट्रस्ट की ओर से भी 3 सिलाई मशीनें प्राप्त हुई हैं। श्री धनरूपमल नागौरी के सयोजकत्व में उद्योगशाला सुचारु रूप से कार्य कर रही हैं और लगभग 30 महिलाए व बालिकाए यहा प्रशिक्षण प्राप्त कर लाभान्वित हो रही हैं । सिलाई, कढाई और बुनाई का कार्य सिखाने की अलग से व्यवस्था है ।

जीव दया

जीव दया विभाग से कबूतरो को नियमित रूप से प्रतिदिन लगभग पाच किलो ज्वार डाली जा रही है ।

श्री सुमति कार्यालय

श्री सुमति कार्यालय जो पूजा उपासना की विविध सामग्री उपलब्ध करता है, उसका कार्य भी सन्तोषजनक ढङ्ग से प्रगति पर है।

बरखेड़ा तीर्थ

बरखेडा व चन्दलाई तीर्थों के जीर्णोद्धार के लिए अभी हाल ही मे चार हजार रुपए स्वीकृत किए गए है और जीर्णोद्धार कार्य प्रगति पर है ।

वार्षिक मेला सानन्द सम्पन्न हुआ और पर्याप्त सख्या मे भाई बहिनों ने इसमें भाग लिया एव स्वामी वात्सल्य का आयोजन भी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस कार्य मे लूनावत परिवार का सहयोग अति सराहनीय है।

अनूठा उदाहरण

इस वर्ष एक अनूठा व अनुकरणीय उदाहरण श्री रणजीतसिंहजी भण्डारी ने प्रस्तुत किया है। अपने पुत्र की शादी म ले गए बरातियो को मालव देश के तीर्थों की यात्रा एव मुनि भगवन्तो के दर्शनों का लाभ दिलाकर उत्तम उदाहरण प्रस्तुत किया । आपने नागेश्वर में माला पहनी । पन्यासश्री के सानिध्य व निश्रा मे दस दिवसीय आत्मानन्द सभा भवन मे अट्ठाई महोत्सव कराया । महोत्सव मे वीर विजयजी कृत चौसठ प्रकारी पूजा जयपुर मे प्रथम बार श्री नागौरी द्वारा पढाई गई ।

आर्थिक स्थिति :

संस्था की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ है। आय–व्यय का विवरण इसके साथ संलग्न किया जा रहा है जिसके अवलोकन से सिद्ध होगा कि वर्ष भर में अनेक विशिष्ठ एवं व्यय साध्य आयोजनो के उपरांत भी संस्था किसी भी प्रकार के भार से मुक्त है तथा स्थाई कोष पर किसी प्रकार का आघात पहुंचे विना न केवल समस्त दैनिक व आवश्यक कार्य पूर्ण हुए हैं वल्कि संस्था की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में योगदान हुआ है।

भविष्य के लिए जो महत्वाकांक्षी योजनाएं विचाराधीन है उनकी सफलता आप सभी के सतत्, उदार एवं हार्दिक सहयोग पर आधारित है।

इस प्रसंग पर मै इतना अवश्य ही निवेदन करना चाहूँगा कि वकाया राशि अभी भी काफी है और समय 2 पर दान दाताओं का ध्यान आकर्षित करने पर भी वांछित सफलता प्राप्त नही है। अतः पुन आग्रह भरी विनती है कि कृपया जो भी वकाया जिस किसी महानुभाव में निकलती हों उसे शीघ्रातिशीघ्र जमा कराकर न केवल संस्था की आर्थिक स्थिति को सुदृढ करने में भागीदार वनें वल्कि भविष्य की योजनाओं की पूर्ति में भी सहायक वनें। देव द्रव्य दान जहां तिराने वाला है वहां देव ऋण डुवाने वाला भी है।

कर्मचारी वर्ग

कर्मचारी वर्ग का सतत् सहयोग भी बरावर प्राप्त होता रहा है एवं महासमिति भी उनके हितों की रक्षा के प्रति जागरूक रही है। समय 2 पर आवश्यकतानुसार वेतन वृद्धियां की गई हैं।

आभार प्रदर्शन

वर्ष भर के समस्त आयोजनों में जिन 2 का सतत् सहयोग प्राप्त होता रहा है उनमें से कुछेक नाम तो मैं इंगित कर सका हूं लेकिन स्थानाभाव एवं समयाभाव के कारण तथा जाने अनजाने जिन बन्धुओं के नाम नहीं गिना सका हूं, लेकिन जिन महानुभावों का किसी भी प्रकार का सहयोग इस संस्था को प्राप्त हुआ है, महासमिति उन सभी के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

यहां में श्री गोपीचन्दजी चौरडिया, जी. सी. इलेक्ट्रिक वालों को पृथक से धन्यवाद दिए विना नहीं रह सकता जिन्होंने निस्वार्थ भाव से शासन सेवा और संस्था के हित में समय 2 पर निःशुल्क विद्युत और ध्वनि प्रसारक यन्त्र की व्यवस्था कर आयोजनों को सफल वनाने मे योगदान किया है। इसी प्रकार श्री प्रेमचन्दजी ढड्ढा की धर्म पत्नी श्रीमती स्व. पानवाई ढड्ढा का आयम्विल-शाला में जो सहयोग प्राप्त होता रहा उसे नहीं भुलाया जा सकता। उनका अभाव हमेशा खटकता रहेगा।

इन्हीं शव्दों के साथ में यह वार्षिक प्रतिवेदन आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूं इस आशा और विश्वास के साथ कि इस संस्था की प्रगति एवं उत्तरोत्तर उन्नति में आप सभी का सहयोग वरा-वर प्राप्त होता रहेगा।

जयपुर
दिनांक 16 सितम्वर, 1974

(महासमिति द्वारा स्वीकृत)
जवाहर लाल चौरड़िया
संघ मन्त्री

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर

छठी महा समिति के पदाधिकारी व सदस्यगण
द्वितीय वर्ष कार्यकाल (१९७२-१९७५)

1	श्री	हीराचन्द एम शाह मण्डारवाले	अध्यक्ष
2	,,	कपिल भाई केशवलाल शाह	उपाध्यक्ष
3	,,	जवाहरलाल चोरडिया	सघमत्री
4	,,	शिखरचन्द पालावत	मदिर व्यवस्था मत्री
5	,,	मनोहरमल लुणावत	उपाश्रय मत्री
6	,,	इन्दरचद चोरडिया	आयम्बिल शालामत्री
7	,,	फतेहसिंह करनावट	भण्डाराध्यक्ष
8	,,	आत्माचन्द भण्डारी	अर्थमत्री
9	,,	सुशील कुमार छजलानी	शिक्षामत्री
10	,,	शान्तिमल भण्डारी	हिसाब निरीक्षक
11	,,	कस्तूरमल शाह	सदस्य
12	,,	बाबूलाल पारख	,,
13	,,	जसवन्तमल साह	,,
14	,,	धनरूपमल नागोरी	,,
15	,,	मदनराज सिंघवी	,,
16	,,	हजारीचन्द मेहता	,,
17	,,	शान्तिलाल वाफना	,,
18	,,	लक्ष्मीचन्द मसाली	,,
19	,,	मोतीलाल भड़कतिया	,,
20	,,	चिन्तामणी ढढ्ढा	,,
21	,,	पदमचन्द छजलानी	,,
22	,,	हीराचन्द बैद	,,
23	,,	चान्दमल बच्छावत	,,
24	,,	कन्हैयालाल जैन	,,
25	,,	उमरावमल पालेचा	,,

श्री वर्धमान आयम्बिल शाला, जयपुर

स्थाई मिति वालों के नाम
(१-४-७३ से ३१-३-७४ तक)

1.	श्री हिन्दूमलजी नेमीचन्दजी शाह	501)00
2.	,, माणकचन्दजी गौतमलालजी	125)00
3.	,, हीराचन्दजी रमेशचन्दजी मेहता (ग्वालियर)	125)00
4.	,, फतेहसिंहजी करवावट	125)00
5.	,, पारसमलजी चम्पालालजी कटारिया	151)00
6.	,, चन्दुलालजी ताराचन्दजी	151)00
7.	,, हीरालालजी भूपतसिंहजी चोरडिया	151)00
8.	,, कंवरलालजी बाफना	151)00
9.	,, घीसीलालजी मेहता	151)00
10.	,, कान्तीभाई लल्लूभाई	125)00
11.	,, सौभागमलजी डागा	151)00
12.	,, गुलाबचन्दजी सिंघी	151)00
13.	,, एक सद्गृहस्थ	151)00
14.	,, अदरक मलजी जैन	151)00
	कुल योग—	2360)00

आवश्यक सूचना

भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव के लिये देश-विदेश में चल रही विशाल तैयारियों की जानकारी के लिये "वीर परिनिर्वाण" मासिक प्रकाशन के ग्राहक बनें। वार्षिक शुल्क दस (१०/–) रुपया मात्र है। वी. पी. पी. की व्यवस्था नहीं है।

मनी आर्डर निम्न पते पर भेजें

व्यवस्थापकः—भगवान महावीर २५०० वीं निर्वाण महोत्सव महा समिति, २१०-दीन दयाल उपाध्याय मार्ग-नई दिल्ली ११०००१

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

महासमिति द्वारा स्वीकृत आय-व्यय प्रतिवेदन

दिनांक 1-4-73 से 31-3-74 तक का

129675)93 श्री मदिरजी खाते जमा
95565)29 गत वर्ष का जमा
34109)64 इस वर्ष की आय
32448)17 भेंट खाते
720) किराया दुकान
12)90 श्री चान्दलाई मंदिर जी
928)57 ब्याज के
———
34109)64
———
129675)93

26092)35 श्री मणिभद्रजी भण्डार खाते जमा
19275)12 गत वर्ष का जमा
6817)13 इस वर्ष की आय
———
26092)35

18532)97 श्री साधारण खाते जमा
18532)97 इस वर्ष की आय
14564)97 भेंट खाते जमा
3390) किराया दुकानो का
578) ब्याज
———
18532)97

12821)38 श्री ज्ञान खाते जमा
6737)72 गत वर्ष का जमा
6083)66 इस वर्ष की उगाई
5532)80 भेंट खाते जमा
550)86 ब्याज का
———
6083)66
———
12821)38

28662)25 श्री मदिरजी खाते नाम
16997)50 आवश्यक खर्च
11664)75 विशेष खर्च
———
28662)25

910)50 श्री मणिभद्रजी भंडार खाते नाम

21054)78 श्री साधारण खाते खर्च
2729)12 गत वर्ष का बाकी
18325)66 इस वर्ष का खर्चा
7458)05 आवश्यक खर्च
10631)86 विशेष खर्च
235)75 ब्याज दिया
———
21054)78

4373)41 श्री ज्ञान खाते नाम
2215)50 आवश्यक खर्च
2157)91 विशेष खर्च
———
4373)41

17778)51 श्री आयम्बिल शाला खाते नाम
4564)28 गत वर्ष का बाकी
13214)23 इस वर्ष का खर्च
5062)12 आवश्यक खर्च
7240)36 विशेष खर्च
125) बरतन खरीदा
786)75 ब्याज
———
17778)51

784)01 स्टेट बैंक आफ बीकानेर एण्ड जयपुर चालू खाते नाम
22191)68 स्टेट बैंक आफ बीकानेर एण्ड जयपुर में
52000) बैंक आफ बड़ौदा में
———
74191)68

11423)87 श्री आयम्बिल खाते जमा

11423)87 इस वर्ष की आय

8096)09 भेंट खाते जमा

496) बरतन खाते

2773)88 दुकान किराया

57)90 ब्याज का

11423)87

1022)52 श्री गुरुदेव खाते जमा

776)38 गत वर्ष का जमा

246)14 इस वर्ष की आय

1022)52

980)31 श्री शासनदेवी खाते जमा

657)66 गत वर्ष का जमा

322)65 इस वर्ष की आय

980)31

105)30 श्री सात क्षेत्र खाते जमा

56) गत वर्ष का जमा

49)30 इस वर्ष का जमा

105)20

3184)00 श्री जीवदया खाते जमा

1797)65 गत वर्ष का जमा

1386)35 इस वर्ष की आय

3184)00

1075)20 श्री सम्मेत शिखर तीर्थयात्री संघ का जमा

4)20 श्री भीलवाड़ा जैन श्वेताम्बर मूर्ति पूजक संघ का जमा

1627)25 बैंक आफ राजस्थान बचत खाते नाम

15140)48 बैंक आफ बड़ौदा बचत खाते नाम

2158) श्री जीवदया खाते खर्च

25748)45 श्री दुकान खरीद खाते नाम दुकान न. 53 बापू बाजार

9819)70 श्री एडवांस खाते नाम

40918)89 श्री उगाही खाते नाम

3661)07 श्री रोकड़ पोते रही

)98 फरक

246839)04

2000) श्री वरखेडा तीर्थ का जमा

1100)22 श्री जैन कल्याण केन्द्र खाते जमा

1608)00 श्री सवत्सरी पारणा कोष खाते जमा

5007)85 श्री श्राविका सघ का जमा

30326) श्री स्थाई मितियो खाते जमा

27966) गत वर्ष का

2360) इस वष का

30326)

1001) श्री नवपदजी पारणा कोष खाते जमा

878)94 श्री उदरत खाते जमा

246839)04

आत्माचन्द भण्डारी
अर्थमंत्री

सम्प्रति कालीन अनुपम कलाकृति युक्त जयपुरमंडन श्री महावीर स्वामी की भव्य नयनरम्य काउस्सग्ग प्रतिमा

श्री सिद्धाचल महातीर्थ छ'री पालित महासघ के स्वागतार्थ श्री आत्म
सभा भवन मे सभा आयोजित की गई थी उसमें अन्य आचार्य भगवन्त
साथ तीर्थप्रभावक आचार्य श्री विक्रमसूरीश्वरजी प्रवचन करते हुए ।
में पन्यास श्री स्थूलभद्रविजयजी बैठे हुए हैं ।
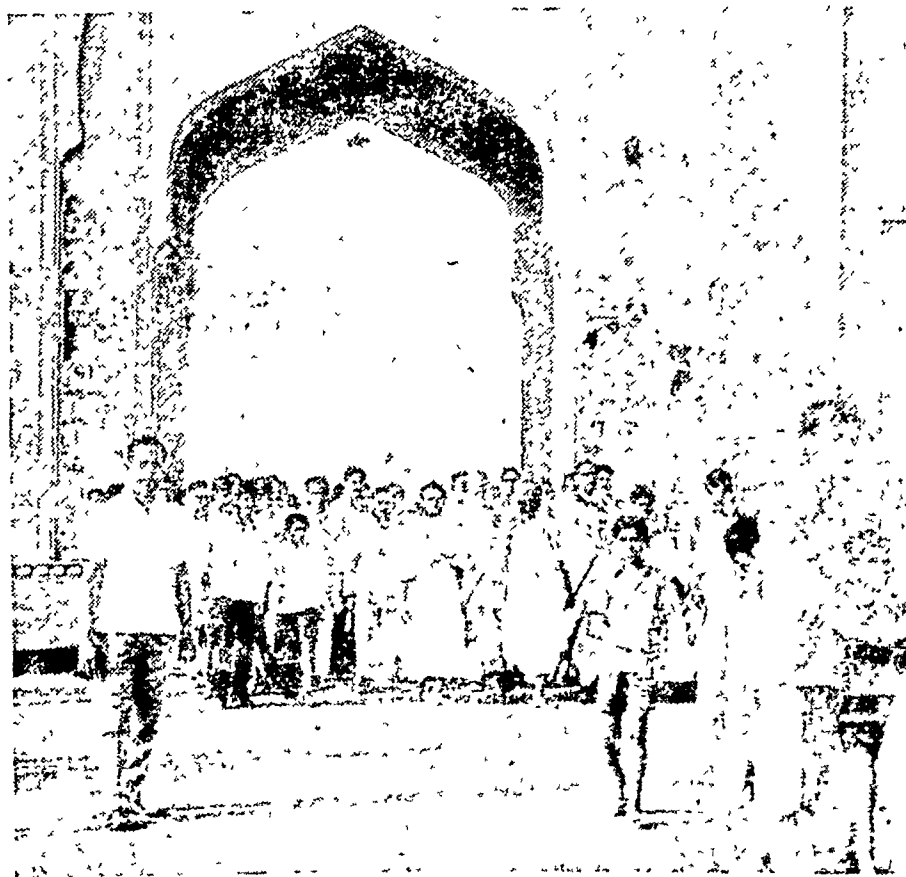
राजस्थान दिवाकर मेवाड़रत्न पूज्य पन्यासप्रवर श्री विशालविज
गणिवर्य (विराट) गुलाबी नगर जयपुर मे प्रवेश करते हुए ।

मानवता के नाते कैसे, मैं भूलों से बच पाता।
कर बैठा कुछ भूलें जिनसे, हुई दूर दिल की साता।
अत आज उन अपराधो की, याद भुलाने आया हूँ,
क्षमा कीजिये क्षमा शील, यह प्रेम प्रार्थना करता हू।
कोमलता से धोकर मन को, धर्म प्रेम से सजा लिया,
मैंने अन्त करण शुद्ध कर, सब जीवों को क्षमा किया।
क्षमावाणी का आज दिवस है, आवो हिलमिल गले मिलें,
पालावत, द्रोह मिटे आपस मे, वचन प्रेम पुरित निकले।

सावत्सरिक प्रतिक्रमण करके, मन, वचन, और काय से सबको क्षमाया आपसे,

चाहें क्षमा सिरनाय के
अपराध अविनय बन गया हो,
यदि कोई इस वर्ष मे
कृपया क्षमा कर दीजिये
सॉवत्सरी के हर्ष में

क्षमाप्रार्थी
शिखरचन्द पालावत
ज्ञानचन्द तिलाचन्द
अरुण कुमार पालावत

शुभकामनाओ सहित-

शिखरचन्द पालावत

(पालावत परिवार)
ज्ञानचन्द, अरुण कुमार आदि

पालावत एजेन्सीज	टाटा टेक्सटाइल्स बापू बाजार, जयपुर
टेक्सटोरीयम पालावत जेम्स	खटाऊ वायल्स एम आई रोड, जयपुर

फोन 73285, 61190, 63976 गृह दूरभाष 62700

卐

आप हम वड़े भाग्य शाली हैं जो परमोपकारी भगवान महावीर के २५००वें परिनिर्वाण वर्ष के समारोहो में सम्मलित होने व तन, मन, धन से प्रभु के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने का सुअवसर प्राप्त कर रहे हैं।

बुध सिंह हीरा चंद बैद — वैंगलोर रेडीमेड क्लाथ स्टोर्स

एमरा एन्टर प्राइजेज — रेडीमेड कारपोरेशन

जौहरी बाजार, जयपुर-३

फोन न ७३०१४, ६२२६२ — तार का पता– 'मणिभद्र'

विश्व वंद्य भगवान महावीर

की

२५०० वीं जयन्ती के महान अवसर पर

राष्ट्र में शांति एवं समृद्धि की

शुभ कामनाओ सहित

ज्ञानचंद, सुशील कुमार सुरेन्द्र कुमार छजलानी

जैनसन चाकू
उपकार ताला [रजि.
निर्माता: रतन एंड कम्पनी आतिश मार्केट, जयपुर

सूचना

हमारी पचवर्षीय प्रकाशन योजना की परि समाप्ति होगई है और नियमानुसार सदस्य महानुभावो को पुस्तकें प्रेपित की जा चुकी हैं।

यदि किसी महानुभाव को पुस्तकें प्राप्त नही हुई हो तो सूचित करने की कृपा करें जिससे कि उन्हे पुस्तकें भिजवाई जा सकें।

101) रुपया प्रेपित कर शीघ्र ही मानद सदस्य बनें जिससे हमारे आगामी प्रकाशन आपको नियमित रूपेण प्राप्त हो सकें।

मत्री
श्री विश्वकल्याण प्रकाशन
आत्मानद सभा भवन
घी वालो का रास्ता, जयपुर-३

पढिए ! पढिए !! एक बार अवश्य पढ़िए !!!

श्री जैन श्वेताम्वर तपागच्छ संघ, जयपुर
का
महत्वपूर्ण प्रकाशन
श्रीमद्विजय हीरसूरीश्वरजी म सा.
की

पूजा स्तवनादि संग्रह

(पूजा स्तवनादि के अतिरिक्त श्रीमद्विजय हीरसूरीश्वरजी म सा एव सम्राट्-अकबर के सम्वधों की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी, साथ ही हुई मनोहारी रगीन चित्र।

मूल्य 1) मात्र

प्राप्ति स्थान
श्री जैन श्वेताम्वर तपागच्छ सघ
श्री आत्मानद सभा भवन
घी वालों का रास्ता, जयपुर 3

२. शिक्षाप्रद रोचक कहानियाँ

मूल्य-2 25